THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL
LIBRARY
OU_176364
UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 323.6 K29N Accession No. G.H 401

Author केला, भगवानदास ।

Title नागरिक शिक्षा । 1946

This book should be returned on or before the date last marked below.

भारतीय ग्रन्थमाला—संख्या १३

नागरिक शिक्षा

लेखक
भारतीय शासन, हमारी राष्ट्रीय समस्याएँ, नागरिक शास्त्र,
और नागरिक ज्ञान आदि के
रचयिता
भगवानदास केला

प्रकाशक
भारतीय ग्रन्थमाला, दारागंज (प्रयाग)

मुद्रक
गयाप्रसाद तिवारी बी. काम., नारायण प्रेस, प्रयाग

पाँचवाँ संस्करण] सन् १९४६ ई० [मूल्य १)

लेखक के चचा, सुयोग्य नागरिक

स्व० रायबहादुर, पंडित

लक्ष्मीचन्द जी केला

की पुण्य-स्मृति में

नागरिक शिक्षा के संस्करण

पहला संस्करण	१०००	प्रतियाँ	सन् १९२८
दूसरा ”	१२५०	”	” १९३२
तीसरा ”	७५०	”	” १९४१
चौथा ”	७५०	”	” १९४३
पाँचवाँ ”	१०००	”	” १९४६

निवेदन

हर्ष का विषय है कि हम इस पुस्तक का यह पाँचवाँ संस्करण छपा रहे हैं। इसमें आवश्यक संशोधन कर दिया गया है। तथापि पाठकों को रेल, तार, डाक और बैंकों आदि के नये से नये नियमों की जानकारी प्राप्त करते रहना चाहिए।

यद्यपि यह पुस्तक बहुत सी शिक्षा-संस्थाओं तथा स्कूल, पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत है, हमारे साधन परिमित होने के कारण इसका यथेष्ट प्रचार नहीं हो रहा है। वास्तव में इसके प्रचार के लिए अभी बहुत गुंजायश है। नागरिक-शिक्षा-प्रेमी महानुभाव इस ओर ध्यान देने की कृपा करें। श्री० जुगलकिशोर जी एम. ए. भूतपूर्व आचार्य प्रेममहाविद्यालय, बृन्दावन, ने इस पुस्तक की शिक्षाप्रद भूमिका लिखने की कृपा की है। अध्यापक महानुभावों से विशेष निवेदन अलग किया गया है।

विनीत

भगवानदास केला

अध्यापकों के लिए

अध्यापक महानुभाव इस पुस्तक को यथा-सम्भव मनोरंजक बनावें। वे जिस नागरिक विषय की शिक्षा दें, उसके कुछ स्थानीय दृष्टान्त विद्यार्थियों के सामने रखें और जब अवसर मिले, वे उन्हें राज्य के भिन्न विभागों, संस्थाओं, तथा उनके कार्यालय आदि का प्रत्यक्ष ज्ञान कराएँ। जिन बातों को विद्यार्थी अच्छी तरह समझते हों, उनके उदाहरण या दृष्टान्त से अज्ञात वस्तुओं का थोड़ा-थोड़ा ज्ञान कराया जाना चाहिए। विद्यार्थियों को समय समय पर माडल, मेजिक लालटेन की तस्वीरें, तथा अन्य चित्र दिखाये जाने चाहिएँ। साथ ही उन्हें कभी-कभी, कल-कारखानों, नहर या नदी के पुल, रेलवे स्टेशन, अदालतों, पुलिस चौकी, चुंगी-घर आदि की सैर करने के लिए प्रोत्साहन देना चाहिए; इससे उनके मन में इन विषयों के ज्ञान का अनुराग बढ़ेगा। विद्यार्थियों के मन पर यह बात अच्छी तरह जमा दी जानी चाहिए कि घर में, और बाज़ार में; स्कूल में और खेलने के मैदान में, रेल में और मुसाफिरखाने में, हर जगह कर्तव्य पालन करने से ही वे अच्छे नागरिक बन सकते हैं।

अध्यापकों को इन विषयों सम्बन्धी अपना ज्ञान बढ़ाने के लिए आवश्यक साहित्य देखते रहना चाहिए; उनके लिए इस ग्रन्थमाला की (१) भारतीय शासन (२) निर्वाचन पद्धति (३) भावी नागरिकों से (४) हमारी राष्ट्रीय समस्याएँ (५) देशी राज्य शासन, और (६) अपराध चिकित्सा पुस्तकें विशेष उपोयगी हैं।

प्रस्तावना

श्री० भगवानदास जी केला ने हिन्दी में राजनैतिक साहित्य रचना का बहुत कार्य किया है। उनकी रचनाओं से हिन्दी-भाषा-भाषी जनता अच्छी तरह परिचित हो चुकी है। जिन विद्यार्थियों ने नागरिक शास्त्र तथा भारतीय शासनपद्धति का विषय लिया है, उनके लिए ये रचनाएँ अत्यन्त उपयोगी रही हैं। अध्यापकों ने भी इन पुस्तकों के लेखक के परिश्रम और योग्यता की सराहना की है। नागरिक विषय सम्बन्धी उनकी यह पुस्तक राजनैतिक साहित्य में और भी वृद्धि करती है; यह विशेषतया इस विषय को आरम्भ करने वालों के लिए लिखी गयी है।

अब तक नवयुवकों की शिक्षा में नागरिक शिक्षा को कुछ महत्व नहीं दिया गया। इस समय भी, इस ओर जो ध्यान दिया जाने लगा है, उसकी गति बहुत ही मन्द है। इसलिए अधिक पुस्तकें प्रकाशित नहीं हुई। सार्वजनिक सेवा के भाव से जिन थोड़े से लेखकों ने इस विषय पर लिखने का साहस किया है, उन्हें शिक्षा विभागों के अधिकारियों द्वारा समुचित प्रोत्साहन नहीं मिला। राजप्रबन्ध सम्बन्धी सिद्धांत और कार्य नवयुवकों के लिए रहस्यमय रहे हैं। उत्तम नागरिकता के भावों से, नवयुवकों के वंचित रहने का परिणाम यह हुआ है कि उनमें सामाजिक चेतनता विकसित नहीं हो पायी, और उन्होंने समाज के प्रति अपने कर्त्तव्य-पालन में अवहेलना की। नागरिक शिक्षा नवयुवक के भावी हित के लिए, केवल उस अवस्था में ही आवश्यक नहीं है, जब उस पर परिवार और नगर का उत्तरदायित्व आता है, वरन् इससे उसे अपने विद्यालय के प्रबन्ध तथा उसकी कठिनाइयों का ज्ञान होने

में प्रत्यक्ष सहायता मिलती है। इससे उसे यह विचार होता है कि उसके अपने विद्यालय, तथा अपनी कक्षा के प्रति क्या-क्या कर्त्तव्य हैं, और वह अपनी कक्षा के अनुशासन और नियंत्रण रखने में भी सहायक हो जाता है।

बहुत से नवयुवक ऐसे हैं, जिन्हें, बी. ए., और एम. ए. की उपाधि धारण करने पर भी, म्युनिसपैलटियों के संगठन और उनके कार्यों तक का भी ज्ञान नहीं होता। उनका अज्ञान और उदासीनता इस शिक्षा-पद्धति का प्रत्यक्ष फल है, जिसमें उन्हें न केवल इस विषय के ज्ञान का अवसर नहीं दिया गया, वरन् नवयुवकों के नागरिकता के भावों की वृद्धि करने का प्रत्येक प्रयत्न रोका गया है। राष्ट्रीय और नागरिक विषयों में नवयुवकों की उदासीनता आश्चर्यजनक और दुखदायी है। इसका उपाय यही है कि नागरिक शिक्षा का विषय अनिवार्य कर दिया जाय, तथा व्यक्ति और समाज की अन्योन्य आश्रयिता की ओर भली भाँति ध्यान दिलाया जाय। समाज की उन्नति व्यक्तियों के बुद्धिमत्तापूर्वक किये हुए प्रयत्नों तथा स्वार्थ-त्यागों पर निर्भर है, और व्यक्ति की उन्नति तभी होती है जब कि समाज अच्छी, विकारहीन स्थिति में हो। यदि शिक्षा मनुष्य को ऐसा उपयोगी नागरिक बनाने में विफल होती है कि वह अपने व्यक्तिगत हित को नगर और देश के बड़े हित के सम्मुख गौण समझे, तो यही नहीं, कि उस शिक्षा का उद्देश्य नष्ट हो जाता है, वरन् वह, शिक्षा के अभाव से भी, अधिक भयकर सिद्ध होती है। अध्यापक का उत्तरदायित्व महान् है। यह उसका काम है कि वह अपने शिष्यों के लिए इस विषय को मनोरंजक बनाये। विद्यार्थियों को नागरिकता

का विचार, कर्त्तव्यों और अधिकारों के सूक्ष्म सिद्धान्तों के वर्णन मात्र से नहीं दिया जा सकता; इसके लिए परिवार और विद्यालय के जीवन के स्थूल उदाहरणों की आवश्यकता है। परिवार और विद्यालय के जीवन में नगर और राज्य के जीवन सम्बन्धी बहुत से अच्छे दृष्टान्त मिलते हैं, और उनके, उदाहरणों से विद्यार्थी नगर और राज्य के जीवन की वास्तविकता अच्छी तरह समझ सकते हैं। नागरिकता के उत्तरदायित्व को अच्छी तरह समझ लेने से विद्यार्थियों के नैतिक भावों की वृद्धि होती है, और इससे वे विद्यालय के सामूहिक कार्यों में अधिक दिलचस्पी से भाग ले सकते हैं।

इस प्रकार नागरिक शिक्षा से व्यक्तियों की सामाजिक और नैतिक चेतनता का विकास होता है, और यही सब शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य है। इस पुस्तक में इस विषय का ऐसी उत्तमता से वर्णन किया गया है कि यह औसत दर्जे के विद्यालय के विद्यार्थियों की समझ में आसानी से आजाय। अतः इसका लेखक विशेषतया अध्यापकों के धन्यवाद का अधिकारी है, जिनका शिक्षा-कार्य उसने सुगमकर दिया है।

अन्त में मैं यह आशा करता हूँ कि जिस शैली से नागरिक शिक्षा का वर्णन इस पुस्तक में हुआ है, उससे नवयुवकों को इस बात में सहायता मिलेगी कि वे विद्यालय और परिवार के प्रति अपना वर्तमान उत्तरदायित्व समझें, तथा, जब वे राज्य के बड़े क्षेत्र में प्रवेश करें तो वे अपने उच्च नागरिक उत्तरदायित्व को सम्मानपूर्वक पूरा करें।

प्रेम महाविद्यालय,
बृन्दाबन

जुगुलकिशोर,
एम० ए०

विषय-सूची

पाठ विषय			पृष्ठ
१—विषय-प्रवेश	...	...	१
२—नागरिक जीवन	...	...	४
३—राज्य के नागरिक	...	...	११
४—सेना	...	...	१७
५—पुलिस	...	...	२१
६—अदालतें	...	...	२७
७—जेल	...	...	३३
८—डाक और तार आदि	...	...	३६
९—रेल और मोटर	...	...	४६
१०—शिक्षा	...	...	५३
११—कृषि और सिंचाई	...	...	६१
१२—सरकारी निर्माण-कार्य	...	...	६६
१३—उद्योग-धन्धे	...	...	६८
१४—व्यापार	...	...	७६
१५—रुपया-पैसा और बैंक	...	...	८१
१६—सहकारी समितियाँ	...	...	८८
१७—स्वास्थ्य-रक्षा	...	...	९३
१८—दुर्व्यसनों का नियंत्रण	...	...	९७
१९—नागरिकों के कर्त्तव्य	...	...	१०१
२०—नागरिकता की व्यावहारिक शिक्षा		...	१०६
परिशिष्ट १—मेरा प्यारा गाँव		...	११०
” २—नागरिकता की कसौटी		...	११४

पहला पाठ

विषय-प्रवेश

मनुष्य आपस में मिलकर रहते हैं—पाठको ! तुममें से कोई अकेला नहीं रहता, तुम सब अपने-अपने घर में अपने माता-पिता आदि के पास, किसी गाँव या नगर में रहते हो। अगर तुममें से कोई अकेला रहने लगे तो पहले तो सुनसान जगह में उसका जी ही नहीं लगेगा, और जंगली जानवरों से भय मालूम होगा; फिर, वहाँ उसका निर्वाह भी तो नहीं हो सकता। उसे खाने-पहनने के लिए भोजन-वस्त्र चाहिए; सर्दी, गर्मी, और बरसात से बचने के लिए मकान चाहिए। कोई आदमी इन तरह-तरह की आवश्यकताओं को अकेला ही पूरा नहीं कर सकता। इन्हें पूरा करने के लिए, आदमी को दूसरों की सहायता की जरूरत होती है। यही कारण है कि प्रायः मनुष्य अकेला नहीं रहता। हर एक आदमी दूसरों से मिलकर रहना चाहता है।

समाज में मिलकर रहने से मनुष्य को एक-दूसरे के विचार मालूम होते हैं। इससे उन्हें अपनी उन्नति करने में सहायता मिलती है। इसके अतिरिक्त, उनमें सेवा, प्रेम और सहानुभूति आदि गुणों की वृद्धि होती है। बड़े (बुजुर्ग), लोग छोटों की भलाई के काम करते हैं, और कष्ट उठाते हैं। छोटे, बड़ों की आज्ञा में रहते हैं। सब एक-दूसरे के

दुख-सुख में साथ देते हैं। इसलिए हम सब मिलकर समाज में रहते हैं।

हम सब एक समाज के अंग हैं—हमें यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि हम सब एक समाज के अंग हैं, समाज हमसे बना है; और, हमारा आपस में इस प्रकार सम्बन्ध है कि एक को कष्ट पहुँचाने से दूसरों को भी कष्ट पहुँचता है, और एक के पिछड़े हुए होने की दशा में दूसरों की यथेष्ट उन्नति नहीं हो सकती। असल में समाज को मनुष्य के शरीर से उपमा दी जा सकती है। जिस प्रकार हाथ, पाँव, नाक, कान आदि एक ही मनुष्य-शरीर के अंग हैं, उसी प्रकार प्रत्येक आदमी, पुरुष हो या स्त्री, बालक हो या वृद्ध, सब अपने-अपने समाज के अंग हैं; चाहे वे जुदा-जुदा कार्य करते हों, भिन्न-भिन्न प्रकार की शिक्षा पाये हुए हों, और चाहे ये अलग-अलग धर्मों को मानने वाले ही क्यों न हों। जिस प्रकार पाँव की एक अंगुली में काँटा लग जाने से शरीर के सब अंग उसकी पीड़ा का अनुभव करते हैं, और यथा-शक्ति उस पीड़ा का निवारण करने में सहायक होते हैं, उसी प्रकार समाज के एक आदमी के पीड़ा होने की अवस्था में दूसरे मनुष्यों को उस कष्ट का अनुभव करके उसे दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए।

हम देखते हैं कि मनुष्य के भोजन करने से उसके सभी अंगों की पुष्टि होती है। यदि हाथ, पाँव और मुँह, यह सोचकर कि इस कार्य से तो अकेले उदर या पेट की पूर्ति होती है, आपस में सहयोग करना छोड़ दें तो इससे सबकी ही हानि होगी। ठीक इसी तरह हरेक मनुष्य की उन्नति से समाज की उन्नति में सहायता मिलती है; समाज के भिन्न-भिन्न अंगों का, अपने अलग-अलग स्वार्थ का विचार करना

अनुचित है।

समाज के हित में हमारा हित है— पाठको! तनिक विचार करने से यह बात स्पष्ट हो जायगी कि यदि हम अपनी भलाई या कल्याण चाहते हैं तो हमें समाज के दूसरे अंगों के हित का समुचित ध्यान रखना चाहिए। तुम जानते होगे कि जब हमारे पास-पड़ोस के किसी स्थान में प्लेग आदि बीमारी फैल जाती है तो उसका हमारे यहाँ आना कितना सहज है। यदि हम चाहते हैं कि हम स्वस्थ या तन्दुरुस्त रहें तो केवल यही काफी नहीं है कि हम अपने घर को साफ सुन्दर रखें; यह भी आवश्यक है कि हम अपने ग्राम और नगर-निवासियों में स्वास्थ्य-रक्षा के नियमों का प्रचार करें।

इसी प्रकार यदि हमारे चारों तरफ़ अनपढ़, मूर्ख, दुराचारी, गाली-गलौच बकनेवाले या दिन भर लड़ाई झगड़ा करनेवाले आदमी रहते हैं, तो उनका प्रभाव हमारे मन पर, खासकर छोटी आयु के बालक बालिकाओं के कोमल हृदयों पर, पड़े बिना न रहेगा। इसलिए हमें अपने पासवालों की उन्नति का ध्यान रखना चाहिए। उनकी बेहतरी में हमारी भी बेहतरी है। उनके नरक कुंड में पड़े रहने की दशा में, हम स्वर्ग का आनन्द कदापि नहीं ले सकते। इसलिए अपने ग्राम, नगर और देश की भलाई करना प्रत्येक आदमी का कर्तव्य है।

समाज के कार्य में प्रत्येक मनुष्य को सहायक होना चाहिए— बहुत से आदमी सोचते हैं कि हम तो गरीब हैं, या असमर्थ हैं; हम दूसरों की भलाई क्या कर सकते हैं। हमें अपना ही निर्वाह करना कठिन है, फिर हम परोपकार की बात क्या सोचें! पाठको! यह कथन अनुचित और असत्य है। प्रत्येक मनुष्य, वह कैसी ही अवस्था में हो,

यदि चाहे तो, दूसरों की थोड़ी-बहुत भलाई अवश्य कर सकता है। कल्पना करो कि कोई आदमी किसी रोग में व्याकुल है, वह बहुत घबरा रहा है। उसे एक आदमी दवाई के लिए पैसे दे देता है, दूसरा उसके लिए उन पैसों की दवाई ला देता है, तीसरा उसके पास बैठकर अपनी बातों से उसे धीरज देता है। इन सब सज्जनों के सहयोग से उसे आराम हो जाता है। इस दशा में यह स्पष्ट है कि पैसेवाला पैसे से जो सहायता कर सकता है, उसकी अपेक्षा वह सहायता किसी प्रकार कम मूल्य की नहीं है, जो दूसरा आदमी सेवा करके, या अच्छी बातें कहकर या हृदय की अच्छी भावनाओं द्वारा कर सकता है। अस्तु, तन से, मन से, या धन से, जैसा अवसर हो, जैसी स्थिति हो, हमें समाज के हित-साधन से पीछे न हटना चाहिए।

दूसरा पाठ

नागरिक जीवन

एक विचार करने योग्य घटना—एक साधारण घटना है, पर है बहुत विचार करने की! स्वयंसेवकों की एक टोली रवाना हो रही थी, उसमें पैंतीस-चालीस सज्जन थे; कुछ, साधारण शिक्षित। और कुछ, उच्च शिक्षा पाये हुए। सभी में विचार और विवेक था, भले-बुरे का ज्ञान था, देश-सेवा की विलक्षण उमंग थी, उत्साह उनके चेहरे से टपका पड़ता था। वे नगर से विदा हो रहे थे। क्यों?

देश के लिए कष्ट सहने के वास्ते उन्होंने कमर कसी थी, मातृभूमि का झण्डा ऊँचा करने के खातिर वे यातनाओं को निमन्त्रण दे चुके थे। वे जुदा-जुदा स्थानों से आकर यहाँ इकट्ठे हुये थे। कुछ, गांववाले थे; और कुछ कस्बों तथा शहर के भी। वे प्रातःकाल प्रस्थान करने लगे। नगर-निवासी बाल-वृद्ध उनके दर्शन के लिए बड़े सवेरे से जाग उठे थे; जगह-जगह उनके स्वागत-सत्कार का प्रबन्ध था, फूल-मालाओं और शर्बत के कुल्हड़ लेने के लिए उनसे थोड़ी-थोड़ी दूर पर आग्रह किया जा रहा था! स्वयंसेवक फूल-मालाएँ अपने गले में धारण करते थे, और शर्बत पी लेते थे। कुल्हड़ों का वे क्या करें? उन्हें वे फेंकते ही। पर इस फेंकने ने बतला दिया कि ये स्वयसेवक चाहे जितने गुणों वाले हों— और उनके त्याग, साहस और कष्ट-सहिष्णुता को प्रशंसा कौन न करेगा—अभी तक उन्होंने नागरिक शिक्षा नहीं पायी है। कुछ ने तो इन कुल्हड़ों को उसी स्थान पर डाल दिया जहाँ वे खड़े थे, और कुछ ने अपनी क़तार से तनिक बचा कर—परन्तु सड़क पर ही—डाल दिया, जहाँ से उनके टुकड़े दूसरों के पाँव में चुभ सकते थे।

यह कार्य नागरिकता के विरुद्ध है। पर इसके खिलाफ आवाज कौन उठाये! हम सभी तो ऐसे कार्य करने के आदी हो गये हैं। फिर, उस समय इस नागरिक-नियम-भंग के अपराधी वे लोग थे, जो राष्ट्र की स्वतन्त्रता के लिए, उसकी मान-रक्षा के लिए, मानो बलिदान होने के लिए जा रहे थे। दूसरे नागरिकों को उनका आदर करना ही चाहिये था। पर वे भूल गये कि उनकी भी गलती तो आखिर गलती ही है, और उसका सुधार किया जाना आवश्यक है। अन्त में नायक

ने स्वयंसेवकों का ध्यान इस ओर दिलाया फिर तो दूसरे नागरिकों ने उनके हाथ मे कुल्हड़ ले लेने का प्रबन्ध कर दिया जिमसे उन्हें फेंकने की ज़रूरत ही न रहे।

नागरिक जीवन की अन्य बातें—ऊपर सड़क के दुरुपयोग का एक उदाहरण दिया गया है, ऐसे अनेक उदाहरण प्रति दिन हमारे सामने आते हैं। हम बाजार में संतरे, केले, मूँगफली आदि खाते हैं, तो छिलके चाहे जहाँ डालते रहते हैं। चलते हुए हम जहाँ इच्छा होती है, थूकते रहते हैं। हम मकान में ऊपर की मंजिल में रहते हैं तो जब चाहा सड़क पर मैला पानी, या कूड़ा-कचरा डाल देते हैं। भारत जैसे निर्धन देश में जहाँ अधिकाश आदमियों के पावों में जूतियाँ नहीं होतीं, इन बातों की ओर ध्यान देने की और भी अधिक आवश्यकता होती है केले के छिलकों पर तो आदमियों के पाँव फिसलने से कई बार बड़ी दुर्घटनाएँ हो चुकी हैं पर हम इससे शिक्षा कब लेते हैं! क्या कभी हम यह सोचने का कष्ट उठाते हैं कि यदि स्वयं हम पाँव फिसलने से गिर जायँ, अथवा नंगे पाँव होने की दशा में हमारे पाँव में कंकर चुभ जाय, या वह थूक में भर जाय या हमारे शरीर पर मैले पानी के छींटे पड़ जायँ तो हमें कैसा लगेगा? जो बातें हमें बुरी लगती हैं वह हम दूसरों के लिए क्यों करते हैं! क्या दूसरों की वे बातें अच्छी लगती हैं? कभी नहीं। यह हम भली भांति जानते हैं, पर इसे जानते हुए भी अपने व्यवहार में इसे भूल जाते हैं।

इस पाठ में हम थोड़ी सी उन बातों की चर्चा करेंगे, जिनका सम्बन्ध हमारे रोजमर्रा के जीवन से है। ये बहुत मामूली मालूम

होने पर भी इतने महत्व की हैं, कि यदि नागरिक इन पर अच्छी तरह ध्यान दें, और ठीक व्यवहार करें तो हमारा नागरिक जीवन कहीं अधिक सुन्दर और सुखमय हो जाय।

नागरिकता का मूल मंत्र—नागरिक जीवन सम्बन्धी ध्यान रखने योग्य मूल बात यह है कि हम प्रत्येक बात-व्यवहार में अपनी दृष्टि केवल अपने स्वार्थ या सुविधा की ओर न रखें। वरन् दूसरों के हित की ओर भी रखें। हमारा कोई कार्य ऐसा न हो, जिससे दूसरों को हानि या कष्ट पहुँचे; हम दूसरों से ऐसा बर्ताव करें, जैसा हम चाहते हैं कि दूसरे हम से करें।

पिछले पाठ में यह बताया जा चुका है कि किसी मनुष्य का जीवन, समाज के दूसरे आदमियों के जीवन से जुदा या स्वतन्त्र नहीं है। प्रत्येक मनुष्य का दूसरे अनेक मनुष्यों से, अपने परिवारवालों से अपने ग्राम और नगरवालों से, अपने प्रान्त या राज्यवालों से तथा अपने राज्य के बाहर भी बहुत से आदमियों से सम्बन्ध होता है। एक के सुख-दुख का, रोग, शोक और हानि-लाभ का परिणाम उसी व्यक्ति तक परिमित नहीं रहता; दूसरे भी बहुत-से आदमियों को भोगना पड़ता है। प्रत्येक समाज के मनुष्य मानो एक ज़ञ्जीर या शृङ्खला में बंधे हुए हैं; एक कड़ी के खराब हो जाने पर वह सारी जंजीर कमज़ोर हो जायगी, जिसका एक अंग हम भी हैं। अपने पड़ोसियों के बीमार रहते हुए, हमारा रोग के कीटाणुओं से सुरक्षित रहने की बात सोचना मूर्खता और शेखचिल्लीपन ही है।

नागरिकता का व्यवहार—इन बातों में कुछ नवीनता नहीं है। ये बातें समय-समय पर अनेक विद्वानों और आचार्यों ने कही हैं। हम

पुस्तकों में पढ़ते हैं, व्याख्यानों में सुनते हैं; और समाचारपत्रों द्वारा भी इनका ज्ञान प्राप्त करते हैं। परन्तु इतना होते हुए भी बहुत कम आदमी इनके अनुसार व्यवहार करते पाये जाते हैं। अनेक बार शिक्षित और समझदार आदमी भी इस विषय में दोषी मिलते हैं। हाँ, यह बात अवश्य है कि क्योंकि अधिकांश आदमी नागरिकता के नियमों की अवहेलना करते हैं, आमतौर से कोई किसी को टोकने या उसकी आलोचना करने का साहस नहीं करता। आदमी अपनी इच्छा से नागरिक नियमों का पालन बहुत कम करते हैं।

बस्ती अर्थात् नगर या गाँव में—ये बातें कुछ उदाहरणों से ध्यान में आ जायँगी। गाँव की तो बात ही क्या, नगरों का विचार कीजिए, जहाँ आदमियों से, अधिक शिक्षित होने के कारण, अधिक समझदारी की आशा की जाती है। म्युनिसपेलटी या सफाई-कमेटी इस बात का प्रबन्ध करती है कि नालियाँ तथा सड़कें साफ रहें और नगर का स्वास्थ्य अच्छा रहे। परन्तु जब तक इसमें नागरिकों का यथेष्ट सहयोग न हो, किसी प्रकार का पञ्चायती प्रबन्ध कैसे सफल हो सकता है? कल्पना करो कि सवेरे छः बजे तक नालियाँ और सड़कें साफ हो गईं, परन्तु घर और दुकानवाले जब चाहा कूड़ा फेंकते रहे तो सफाई कैसे रह सकती है! नागरिकों को चाहिए कि मेहतर के आने से पहले ही अपने घर या दुकान आदि का कूड़ा इकट्ठा करके एकसाथ बाहर डाल दें। मेहतर के साफ करके चले जाने के बाद, फिर जो कूड़ा हो, उसे बारबार सड़क पर न फेंक कर घर में ही एक टोकरी या कनस्तर में जमा करते रहें और मेहतर के दूसरी बार आने के समय ही उसे बाहर डालें।

कितनी ही औरतें दूसरों की आँख बचाकर अपने बच्चों को नालियों में टट्टी बैठा देती हैं, जिससे उन्हें बच्चों की टट्टी साफ करने की ज़रूरत न पड़े। हम ने कई बार बड़े बड़े शहरों की नालियों को बड़े उम्र के आदमियों के मैले से सनी हुई देखा है। हम बड़े शहरों में रहते हैं तो क्या हुआ, हमारा व्यवहार तो नीचता का ही है। वृन्दावन से ऐसी घटनाओं को रोकने के लिए म्युनिसपल बोर्ड के चेअरमेन तथा सेनिटरी इन्सपेक्टर ने प्रातःकाल अंधेरे ही उठ कर कुछ दिन लगातार गलियों और मोहल्लों में गस्त लगाया था। जब तक लोगों में नागरिकता का यथेष्ट ज्ञान न हो, सभी नगरों के अधिकारियों को सतर्क रह कर समुचित देखरेख और व्यवस्था करनी चाहिए।

यात्रा के अवसर पर, रेल में तथा धर्मशाला आदि में— हम में नागरिकता की भावना कितनी जाग्रत हो पायी है, इसकी ठीक जाँच उस समय होती है, जब हम अपनी बस्ती से बाहर होते हैं, जहाँ के आदमियों का हम विशेष लिहाज नहीं करते। रेल के डिब्बे में रोजमर्रा का अनुभव क्या बतलाता है! कितने ही आदमी खाना खाकर जूठन तथा पत्ते अपनी सीट (बैठने की जगह) के नीचे ही डाल देते हैं; मूंगफली या संतरे खानेवाले, छिलके बाहर नहीं फेंकते। गन्ना चूसनेवाले भी उसके छिलके बाहर फेंकने का कष्ट नहीं उठाते। तमाखू पीने या खाने वाले अपनी सीट के पास ही थूकते हुए नहीं लजाते। कहाँ तक गिनावें! कभी-कभी तो इन लोगों की ऐसी आदतों के कारण किसी भले आदमी के लिए गाड़ी में बैठना कठिन हो जाता है पर वे ज़रा भी नहीं सोचते कि उनके व्यवहार से, उनकी थोड़ी सी आरामतलबी, से दूसरे आदमियों को कितनी असुविधा होती है। वे

अपनी यात्रा पूरी करके उतर जाते हैं, दूसरों के दुःख से उन्हें क्या मतलब !

मुसाफिरखानों और धर्मशालाओं में, जगह-जगह व्यावहारिक नागरिकता में हमारी गलतियों के उदाहरण मिलते है इन स्थानों में प्रायः सवेरे और तीसरे पहर दो बार सफाई होती है, और इन्हें गन्दा करने का काम तो दिन भर, और हाँ, प्रायः रात को भी चलता रहता है। जो यात्री दोपहर को या रात में इन स्थानों में ठहरते हैं, उन्हें बहुधा परेशान होना पड़ता है; सिवाय उन थोड़े से स्थानों के, जहाँ हर घड़ी सफाई करने के लिए खास तौर से आदमी मुकर्रर रहता है।

बाजार के काम में—हमारी नागरिकता की भावना के अभाव ने बाजार से चीज़ मोल लाने या बेचने को एक बड़ी 'कला' बना रखा है। चीज बेचनेवाला चाहता है कि उसकी वस्तु घटिया होने पर भी ग्राहकों को अच्छी दिखायी दे, वह उनकी आँखों में धूल झोंकने के सब प्रकार के प्रयत्न करता है, और अधिक-से-अधिक दाम लेने की घात में रहता है। जितना वह ग्राहकों को अधिक ठग सकता है, उतना ही वह अपने आपको अधिक कुशल या होशियार समझता है। कभी-कभी ग्राहक भी अपना खोटा सिक्का दुकानदार के गले मढ़ आता है अथवा दुकानदार को धोखा देकर कुछ कम पैसे दे आने में सफल हो जाता है। सार बात यह है कि न ग्राहक को यह विश्वास होता है कि उसे अच्छी चीज मिलेगी या उचित दामों में मिलेगी, और न दुकानदार को यह भरोसा रहता है कि जब तक वह पूर्ण सावधान न रहे, उसे अच्छा सिक्का या पूरा मूल्य मिलेगा। दोनों के दिल

में अविश्वास और आशंका होती है।

नागरिकता की शिक्षा—ऐसे नागरिक जीवन से सभी को कष्ट होता है। सुधार का उपाय क्या ? इस विषय में एक मुख्य बात यह है कि विद्यार्थियों की शिक्षा में नागरिक शिक्षा को समावेश अवश्य होना चाहिए। जिस शिक्षा में नागरिकता की शिक्षा को यथेष्ट स्थान प्राप्त नहीं है, वह शिक्षा अधूरी है। याद रहे कि नागरिकता एक व्यावहारिक विषय है। विद्यार्थियों को इसकी केवल मौखिक, ज़बानी या किताबी शिक्षा ही नहीं मिलनी चाहिए। उनके सामने तो इसके अमली दृष्टाँत और उदाहरणों के नमूने रखे जाने चाहिए।

यह काम खासकर माता पिता और अध्यापकों का है। उन्हें चाहिए कि अपनी बोलचाल और व्यवहार से, अपने प्रत्येक कार्य से नागरिकता की शिक्षा दें। खासकर छोटे बालकों में अनुकरण या नकल करने की रुचि बहुत होती है, उनपर अपने माता पिता और अध्यापकों की बातों की अपेक्षा उनके कार्यों का बहुत प्रभाव पड़ता है। आशा है, अपनी संतान का हित चाहने वाले माता पिता तथा अपने विद्यर्थियों की उन्नति चाहने वाले अध्यापक इस ओर समुचित ध्यान देंगे।

तीसरा पाठ
राज्य और नागरिक

पाठको ! तुम परिवार की बात जानते हो। पिता परिवार का पालन-पोषण करने के लिए जरूरी चीजें लाता है, माता घर का प्रबन्ध

करती है। बड़े लड़के लड़कियाँ उन्हें उनके कार्य में यथा-शक्ति सहायता देती हैं। सब के कर्तव्य-पालन तथा सहयोग से परिवार का सुख बढ़ता है। जिस परिवार के आदमी आपस में लड़ते-झगड़ते हैं, अपना कर्तव्य पालन नहीं करते, वह परिवार बहुत दुखी रहता है, और पड़ोस में उसकी बड़ी निन्दा होती है, इसलिए परिवार के सब आदमियों को परिवार के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए।

इसी तरह तुम जानते हो कि क्रिकेट या फुटबाल के खेल में एक कप्तान (केप्टेन) होता है। उसे, खेलनेवाले इसलिए चुनते और कुछ अधिकार सौंपते हैं कि वह खेल का ठीक-ठीक प्रबन्ध करे, और किसी को नियम-विरुद्ध कार्य न करने दे।

जिस प्रकार परिवार में परिवार के, और खेल मे खेल के, नियम पालन करने की आवश्यकता है, उसी प्रकार ग्राम या नगर, तहसील, तालुका, जिला या प्रान्त में इन-इन स्थानों के नियम पालन किये जाने चाहिए; तभी देश में सुख शान्ति और उन्नति हो सकती है। परन्तु बहुधा आदमी इस बात को भूल जाते हैं।

सरकार की आवश्यकता—जिस प्रकार माता पिता की अनुपस्थिति या गैरहाजिरी छोटे बालकों का और कप्तान की अनुपस्थिति में खेलनेवालों का कभी-कभी झगड़ा हो जाता है, उसी प्रकार गाँव या नगर आदि में जब तक कोई नियम पालन करानेवाला न हो, कुछ आदमी नियम भंग करने लगते हैं। यद्यपि अधिकतर मनुष्य शान्ति-प्रिय होते हैं, और अपनी इच्छा से ही सब काम नियमपूर्वक करते है, तथापि कुछ आदमियों का ऐसा स्वाभाव होता है कि जब तक उन्हें

किसी का डर न हो, वे चोरी या लूट-मार करेंगे या अन्य प्रकार से दूसरों को कष्ट देंगे। इस से बड़ी शान्ति तथा हानि होती है। इसलिए देश में कुछ ऐसे आदमियों के एक समूह या संस्था की आवश्यकता होती है, जो सब से नियम पालन कराये और शान्ति रखे। ऐसी संस्था की ज़रूरत इसलिए भी होती है कि जिन कामों को आदमी अलग-अलग न कर सकें, उनको वह सब की ओर से कराती रहे, वह सब की उन्नति में सहायक हो। इस संस्था को सरकार या 'गवर्मेन्ट' कहते है।

साधारण बोलचाल में जिसे कुछ अधिकार या शक्ति हो, उसे ही सरकार कह देते हैं। बहुत-से नौकर अपने मालिक को सरकार कहा करते हैं। परन्तु असल में सरकार उन आदमियों का समूह है, जो देश या उसके किसी भाग में सुख-शान्ति का प्रबन्ध करे और उस की, बाहर के शत्रुओं से, रक्षा करे।

भारतवर्ष की सरकार को 'भारत-सरकार' कहते हैं, और, इस देश के एक-एक प्रान्त की सरकार वहाँ की प्रान्तीय सरकार कहलाती है। इसके विषय में विशेष बातें तुम हमारी दूसरी पुस्तक 'भारतीय शासन' में पढ़ोगे। यहाँ, यह बताया जाता है कि सरकार किस-किस प्रकार के कार्य किया करती है।

सरकार के कार्य—कुछ कार्य तो ऐसे होते हैं, जो प्रत्येक देश की सरकार को करने होते हैं। यदि ये कार्य न किये जायँ तो आदमी अपना रोजमर्रा का साधारण कार्य-व्यवहार न चला सकें, उनका जीवन संकटमय हो जाय। ऐसे कार्यों को हम सरकार के शान्ति रखने के कार्य कह सकते हैं। ये कार्य नीचे लिखे हैं:—

(१) सरकार देश की, बाहर के शत्रुओं से, रक्षा करती है।

विदेशियों के आक्रमण रोकने के लिए स्थल सेना, जल सेना, तथा वायु सेना रखी जाती है।

(२) सरकार देश के भीतर शान्ति रखती है; चोर, डाकू आदि से लोगों के जान-माल की रक्षा करती है। इस कार्य के लिए पुलिस रखी जाती है।

(३) पुलिस जिन लोगों को अपराधी समझकर गिरफ्तार करे, अथवा जिनके विरुद्ध कोई अभियोग हो, उनके विषय में सरकार यह निश्चय करती है कि वे वास्तव में अपराधी हैं या नहीं; यदि वे अपराधी हैं तो उनसे कैसा बर्ताव किया जाना चाहिए, या उन्हें क्या दंड दिया जाना चाहिए। यह कार्य न्यायालय करते हैं। बहुत-से अपराधियों को, दंड देने के लिए कैद किया जाता है। इसके वास्ते जेलों का प्रबन्ध होता है।

कुछ कार्य ऐसे होते हैं, जो उपयोगी तो होते हैं, परन्तु ऐसे नहीं होते कि उनके न किये जाने से लोगों का रोजमर्रा का काम ही न चले, या उनकी जान जोखम में रहे। फिर, जिन देशों के आदमी उन्नत अवस्था में होते हैं, उनमें उन कार्यों को वे स्वयं कर लेते हैं; सरकार को उनके करने की जरूरत नहीं होती। मिसाल के तौर पर लोगों के पत्र-व्यवहार और आमदरफ्त के लिए डाक, तार और रेल आदि का प्रबन्ध करना, शिक्षा के लिए विद्यालय और महाविद्यालय चलाना, व्यापार के वास्ते बैंक खोलना, सड़कें बनाना, तथा रेल, ट्रामवे और मोटर आदि का प्रबन्ध करना; खेती के लिए नहरें और तालाब आदि बनवाना, स्वास्थ्य-रक्षा के लिए नगरों और ग्रामों में सफाई का इन्तजाम करना, तथा अस्पताल और शफाखाने खोलना आदि।

सरकार के इन दोनों तरह के कार्यों का खुलासा बयान आगे किया जायगा। यहाँ हमें एक और बात का विचार करना है।

राज्य किसे कहते हैं—जब किसी देश में सरकार अपना कार्य करने लग जाय और वह किसी अन्य सरकार के अधीन न हो, तो वह देश 'राज्य' या 'स्टेट' कहा जाता है। किसी देश का क्षेत्रफल और जनसंख्या कुछ ही क्यों न हो, राज्य होने के लिए वहाँ एक स्वतंत्र सरकार का रहना अत्यन्त आवश्यक है। उदाहरण के लिए यद्यपि भारतवर्ष एक बड़ा देश है, और यहाँ चालीस करोड़ आदमी रहते हैं, इसे अभी असल में 'राज्य' नहीं कह सकते; क्योंकि यहाँ की सरकार अभी बहुत-सी बातों में स्वतंत्र नहीं, उसे ब्रिटिश (अंगरेज़) सरकार की अधीनता में काम करना पड़ता है। हाँ, अब यह अधीनता दूर होने और भारतवर्ष के स्वतंत्र होने की योजना बन रही है। इसके अमल में आने पर यह देश असल में राज्य कहा जा सकेगा। इंगलैंड और फ्रांस आदि देश बहुत छोटे-छोटे हैं, तथापि वे 'राज्य' कहे जाते हैं; कारण, वहाँ की सरकारें अपने-अपने देश का भीतरी तथा बाहरी प्रबन्ध करने में सर्वथा स्वतंत्र हैं, किसी के अधीन नहीं।

नागरिक या प्रजा—तुम बहुधा सुनते होगे कि हम भारत-वर्ष के नागरिक हैं। स्मरण रखो कि 'नागरिक' का अर्थ केवल नगर में रहनेवाला ही नहीं होता। जब इस शब्द का, राज्य के प्रसंग में, व्यवहार किया जाता है तो इससे ऐसे आदमी का मतलब होता है, जिसे राज्य में खास-खास अधिकार होते हैं, और जिसे राज्य के प्रति विविध कर्तव्य पालन करने होते हैं। इन अधिकारों और कर्तव्यों की बातें तो तुम्हें पीछे मालूम होंगी, इस समय तुम इतना ही जान लो कि

किसी राज्य में बहुत मुद्दत तक रहनेवाले आदमी उस राज्य के नागरिक या प्रजा कहलाते हैं। इस विषय में जाति-पांति, धर्म या सम्प्रदाय आदि की दृष्टि से कोई भेद-भाव नहीं माना जाता। उदाहरण के लिए, जब कि तुम्हारे पूर्वज या पुरखे बहुत अर्से से भारतवर्ष में रहते आये हैं, और तुम भी यहीं रहते हो तो, फिर चाहे तुम हिन्दू, मुसलमान, ईसाई या पारसी किसी भी जाति या धर्म के क्यों न हो, तुम सब भारतीय नागरिक कहे जाओगे। यही नहीं, यदि कोई अंगरेज़ या जापानी आदि भी यहाँ स्थायी रूप से बस जाय, तो वह और उसकी सन्तान भी भारतीय नागरिक मानी जायगी।

राज्य की उन्नति—तुम जानते हो कि कोई गाड़ी तब अच्छी तरह चलती है, जब उसके दोनों पहिये बराबर मज़बूत और खूब चलनेवाले हों। राज्य भी एक प्रकार की गाड़ी है, जिसके दो पहिये सरकार और नागरिक हैं। राज्य की उन्नति के लिए आवश्यक है कि दोनों ही अपने-अपने कर्तव्यों का उचित रीति से पालन किया करें। जिस प्रकार सरकार का कर्तव्य है कि नागरिकों की सब प्रकार से उन्नति तथा रक्षा करे, उसी तरह नागरिकों को भी चाहिए कि सरकार के नियमों (क़ानूनों) का पालन किया करें; तथा आवश्यकतानुसार उसकी सहायता करते रहें। नागरिकों को यह जानना चाहिए कि सरकार द्वारा उनके देश में क्या क्या कार्य होते हैं, तभी वे बड़े होकर उनमें सहायक हो सकते हैं, तथा, जरूरत होने पर, उचित सुधार भी कर सकते हैं। अगले पाठों में इन बातों का कुछ खुलासा विचार किया जायगा।

चौथा पाठ

सेना

पाठको ! पिछले पाठ में तुम यह पढ़ चुके हो कि सरकार का एक कार्य, विदेशियों की चढ़ाई से, देश की रक्षा करना है। क्या ही अच्छा हो, यदि कोई राज्य किसी दूसरे पर आक्रमण न करे, और सब राज्य आपस में प्रेम-भाव रखें। परन्तु वर्तमान अवस्था में प्रायः हर एक राज्य को दूसरों के आक्रमण का भय रहता है। दूसरों से अपनी रक्षा करने के लिए, प्रत्येक देश में कुछ आदमी ऐसे रखे जाते हैं जो युद्ध-विद्या में निपुण हों, जिन्होंने तलवार, बन्दूक, तोप आदि चलाना सीख लिया हो। इन आदमियों के समूह को सेना कहते हैं।

सेना के भेद—दूसरे देशों की तरह भारतवर्ष में भी प्राचीन काल में लड़ाइयाँ भूमि या स्थल पर ही होती थीं, और उनमें (स्थल-सेना के) पैदल या घुड़सवार सिपाही भाग लेते थे। परन्तु अब समुद्र पर भी लड़ाइयाँ होती हैं, इन लड़ाइयों में जल-सेना काम करती है। जलसेना में लड़ाकू जहाज, पनडुब्बियाँ तथा उन पर रहनेवाले सिपाही होते हैं। इसके अतिरिक्त, विज्ञान की उन्नति हो जाने के कारण, अब आकाश से हवाई जहाज़ों द्वारा बम के गोले बरसाये जा

सकते हैं। इसके लिए सरकार वायु-सेना के आदमी तथा सामान रखती है। इस प्रकार आजकल सेना तीन प्रकार की होती हैः—(१) स्थल-सेना (२) जल-सेना और (३) वायु-सेना।

भारतवर्ष में स्थल-सेना—पहले सेना कहने से स्थल-सेना ही समझी जाती थी। इस समय भी इसी का महत्व विशेष है। प्राचीन समय में यहाँ सेना 'चतुरंगिणी' होती थी, अर्थात् उसके चार अंग होते थे, पैदल सिपाही, घुड़सवार (रिसाला), रथ और हाथी। तुमने सुना ही होगा कि महाभारत की लड़ाई में पांडवों की सेना का प्रधान व्यक्ति अर्जुन रथ पर सवार था, जिसे श्रीकृष्णजी ने हाँका था। इसी प्रकार तुमने पढ़ा होगा कि पोरस और सिकन्दर की लड़ाई के समय यहाँ सेना में हाथियों का कैसा महत्वपूर्ण भाग था। आधुनिक काल में सेना में रथ और हाथी नहीं होते। हाँ, अब दो नये अंग और रहने लगे हैं, तोपखाना और सपरमेना। 'सपरमेना' में इंजिनियर और ओवरसियर आदि होते हैं, जो आगे जाकर सेना के लिए पुल सड़क आदि बनाते हैं।

भारतवर्ष में सेना के जुदा जुदा भागों का अलग-अलग प्रान्तों से सम्बन्ध नहीं है, सब सेना भारत-सरकार की निगरानी में रहती है। सेना का सदर मुकाम या हेडक्वार्टर शिमला है। प्रधान सेनापति को जंगी लाट या कमांडर-इन-चीफ़ कहते हैं, वह प्रायः कुछ सदस्यों की एक सभा के परामर्श से काम करता है।

स्थल-सेना का मुख्य भाग हर समय लड़ाई के लिए तैयार रहता है। यह भारतवर्ष की सीमा पर रहता है; कुछ दशाओं में भारतवर्ष से बाहर भी भेजा जा सकता है। यह स्थायी रूप से रहता है। इसे

'रेग्यूलर सेना' कहते हैं। इसके सिपाहियों और अफ़सरों में आम तौर पर लगभग ढाई लाख आदमी होते हैं। ऊँचे अफ़सर अभी अधिकतर अँगरेज़ होते हैं। भारतवासियों को उच्च पदों पर कार्य करने का अवसर कम दिया जाता है, यद्यपि उनकी योग्यता का अच्छा परिचय मिल चुका है।

स्थल सेना में रेग्यूलर या स्थाई सेना के अलावा कुछ सहायक या 'आग्ज़ीलियरी' सेना होती है। इसके तीन भेद हैं :—

१—कुछ सेना ऐसी होती है, जो देश के बाहर नहीं भेजी जाती, यहाँ ही लड़ती है। इसे मुल्की वा 'टेरीटोरियल' सेना कहते हैं। इसमें आमतौर पर लगभग अठारह हज़ार सैनिक होते हैं। इसी सेना में भिन्न भिन्न विश्वविद्यालयों की 'यूनिवर्सिटी ट्रेनिङ्ग कोर' रहती है। इसमें कालिजों के ऐसे विद्यार्थी और प्रोफेसर होते हैं, जो सैनिक शिक्षा पाये हुए हों।

२--सेना का एक भाग नौकरी किये हुए आदमियों का होता है, जो अपना-अपना निज का काम करते हैं, और आवश्यकता होने पर हथियारबन्द हो जाते हैं। इनमें अधिकांश योरपियन, युरेशियन तथा ईसाई लोग ही हैं। ये प्रायः बन्दरगाहों, रेलों, छावनियों तथा नगरों की रक्षा करते हैं। इनकी सेना को रिजर्व सेना कहते हैं। इसमें साधारण तौर पर लगभग चालीस हज़ार सैनिक होते हैं।

३—भारतवर्ष की बड़ी-बड़ी रियासतें अंगरेज अफसरों के अधीन कुछ पलटनें रखती हैं। इनमें रियासतों के आदमी भरती किये जाते हैं, और इनके लिए ख़र्च भी रियासतें ही करती हैं। इस प्रकार की सेना को भारतीय-राज्य-सेना वा 'इंडयन स्टेट्स फोर्सेज़' कहते हैं। इसमें

लगभग तीन हजार सैनिक होते हैं।

स्थल सेना के सैनिकों की ये संख्याएँ साधारण शान्ति-काल की है; युद्ध-काल में बहुत अधिक बढ़ जाती हैं।

जल-सेना—जल-सेना की शक्ति लड़ाकू जहाजों से जानी जाती है। इसे 'रायल इण्डियन नेवी' कहते हैं। इसका काम सैनिक, तथा युद्ध का सामान, लाना-लेजाना, हिन्द महासागर में पहरा देना, समुद्री डाकुओं का दमन, बन्दरगाहों की रक्षा और समुद्री नाप-जोख करना है। इसके कर्मचारियों में लगभग आधे भारतवासी हैं।

वायु-सेना—वायु-सेना की शक्ति का हिसाब वायुयानों (हवाई जहाजों) से लगाया जाता है। इसे "रायल इंडयन एअर फोर्स' और इसके संचालक को 'एअर वाइस मार्शल' कहते हैं। वह प्रधान सेनापति को परामर्श देनेवाली सभा का सदस्य होता है। हवाई जहाजों पर बैठकर उड़ने की शिक्षा देने के लिए कुछ स्थानों में 'मिलिटरी फ्लाईंग स्कूल खोले गये हैं। भारतवर्ष में वायु-सेना का उपयोग अधिकतर पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त में होता है।

सेना का कार्य—सेना का मुख्यकार्य देश की बाहर के आक्रमणकारियों से रक्षा करना है। इसलिए भारतवर्ष की पश्चिमी सीमा के क्वेटा और पेशावर आदि स्थानों पर काफी सेना रहती है। आवश्यकतानुसार दूसरे स्थानों से भी सेना वहाँ मँगायी जा सकती है। सीमा की रक्षा के अलावा सेना देश की भीतरी शान्ति के लिए भी काम आती है और इसलिए वह स्थान-स्थान पर छावनियों में रखी जाती है। यों तो शान्ति रखने का कार्य पुलिस का है; परन्तु विशेष दशाओं में, भारी उपद्रव आदि होने पर, सेना की सहायता ली

जाती है, यहाँ तक कि विशेष आवश्यकता होने पर उस स्थान का शासन-प्रबन्ध फौजी अधिकारियों को ही सौंप दिया जाता है। यह तो सेना का भारतवर्ष सम्बन्धी कार्य हुआ। कुछ दशाओं में पार्लियामेंट की स्वीकृत होने पर, भारतीय सेना भारतवर्ष के बाहर भी, ब्रिटिश साम्राज्य की रक्षा के लिए, अथवा ब्रिटिश सरकार की सहायता के वास्ते, भेजी जाती है। दोनों योरपीय महायुद्धों तथा कई अन्य अवसरों पर ऐसा हुआ है।

सैनिक शिक्षा और व्यय—भारतवर्ष के लिए ब्रिटिश सिपाहियों और अफसरों की शिक्षा प्रायः इङ्गलैंड में होती है, उसका खर्च भारतवर्ष ही देता है। कुछ हिन्दुस्तानियों को भी वहाँ शिक्षा पाने की अनुमति है। इंगलैंड के सैंढर्स्ट कालिज में सैनिक शिक्षा पाने के योग्य बनाने के वास्ते कुछ नवयुवकों को यहाँ देहरादून आदि स्थानों में सैनिक योग्यता करायी जाती है।

भारतवर्ष में सेना के वेतन आदि का व्यय साधारण समय में ही पचास से लेकर सत्तर करोड़ रुपये तक प्रति वर्ष होता रहा है; युद्ध के समय तो कहीं अधिक हो जाता है। यहाँ एक अँगरेज़ या योरपियन सैनिक का खर्च हिन्दुस्तानी सैनिक की अपेक्षा कई गुना होता है। भिन्न-भिन्न देशों में सैनिक व्यय बहुत अधिक होने पर भी संसार में युद्ध या उसकी आशंका बनी रहती है। कुछ सज्जनों का मत है और बहुतों की इच्छा है कि आजाद भारत में न फौज हो न हथियार; हाँ, वीर सत्याग्रही दलों का यथेष्ट संगठन रहे।

पाँचवाँ पाठ

पुलिस

पाठको ! पिछले पाठ में तुम यह पढ़ चुके हो कि देश को बाहर के शत्रुओं से बचाने के लिए सेना रखी जाती है। अब, इस पाठ में हम तुम्हें यह बतलायेंगे कि देश के भीतर लोगों की जान-माल की रक्षा करने के लिए क्या प्रबन्ध किया जाता है। तुम में से अधिकतर पाठक देश के भीतर ही रहते हैं, सीमा पर नहीं। इसलिए देश की भीतरी शान्ति के सम्बन्ध में कुछ बातें तुम स्वयं जानते होगे। तुम नित्य शहरों में और गाँवों में पुलिस के आदमियों को गश्त लगाते और पहरा देते हुए देखते हो। पुलिस के इन कामों का उद्देश्य यह होता है कि देश के अन्दर शान्ति रहे, चोर-डाकू उपद्रव न मचावें, अपराधियों की खोज की जाय, और उन्हें न्यायालय पहुँचाया जाय।

पहले यहाँ प्रत्येक गाँव या शहर के आदमी अपनी रक्षा का प्रबन्ध स्वयं करते थे। वे शहरों में कोतवाल, तथा गाँवों में चौकीदार और नम्बरदार रखा करते थे। उन्हें पैदावार का कुछ भाग दिया जाता था। अंगरेज़ों की अमलदारी में यहाँ वेतन पानेवाली पुलिस रखी जाने लगी।

साधारण पुलिस—खाकी (या नीली) वर्दी और लाल साफेवाले पुलिस के सिपाही को तुम जानते ही हो। ज़िले में पुलिस दो तरह की होती है, एक के पास हथियार होते हैं, दूसरी के पास नहीं होते। हथियारबन्द अर्थात् सशस्त्र पुलिस का काम सरकारी ख़ज़ानों का पहरा देना, कैदियों के साथ जाना, और डाकुओं के दल पर चढ़ाई करना है। उसे फौजी ढङ्ग पर क़वायद करना और गोली चलाना सिखाया जाता है। अशस्त्र पुलिस सरकारी जुरमाना वसूल करती है, सड़कों पर भीड़ न होने देने का प्रबन्ध करती है, आवारा कुत्तों को मारती है, और अपराधियों को पकड़ती है। अपराधों को रोकने के लिए पुलिस पुराने अपराधियों पर दृष्टि रखती है। थानों में बदमाशों और गुण्डों का रजिस्टर रखा जाता है।

खुफिया पुलिस—सरकार कुछ कर्मचारी इसलिए भी रखती है कि वे गुप्त रूप से पता लगाते रहें कि प्रजा के कौन-कौन आदमी सरकार के विरुद्ध षड़यंत्र, जालसाजी अथवा डकैती करते हैं या नकली सिक्का आदि बनाते हैं। इन कर्मचारियों को 'सी. आई. डी.' या खुफिया पुलिस कहते हैं। दूसरी पुलिस की तरह इसके कर्मचारियों की ख़ास वर्दी नहीं होती। यह हमारे तुम्हारे जैसे ही कपड़े पहनते हैं; इस लिए इन्हें कोई पहचान नहीं सकता, और यह चुपचाप गुप्त रूप से अपना काम करते रहते हैं। एक-एक प्रान्त की खुफिया पुलिस के प्रधान अफसर का दर्जा साधारण पुलिस के डिप्टी-इन्स्पेक्टर-जनरल के बराबर होता है। इसके अधीन कुछ इन्स्पेक्टर और सबइन्स्पेक्टर होते हैं।

रिज़र्व पुलिस—सरकार कुछ पुलिस ऐसी भी रखती है, जिसे किसी खास जगह काम करना नहीं होता, यह जहाँ ज़रूरत होती है, वहाँ

भेज दी जाती है। इसे 'रिज़र्व पुलिस' कहते हैं। जब सरकार को यह मालूम होता है कि किसी विशेष ग्राम या नगर में अधिक उपद्रव होते हैं, तो वह वहाँ इस पुलिस में से कुछ भेज देती है, और इसका खर्च उस स्थानवालों से वसूल करती है। इसे 'प्यूनिटिव' पुलिस कहते हैं। 'प्यूनिटिव' का अर्थ है, दण्ड सम्बन्धी।

रेलवे पुलिस—स्टेशनों तथा रेलगाड़ियों में भी पुलिस की आवश्यकता होती है, इसके लिए अलग पुलिस रहती है। इसके आदमी स्टेशनों पर काम करते हैं, तथा रेल में मुसाफिरों के साथ जाते हैं।

पुलिस का संगठन—पुलिस का संगठन प्रान्तवार है, अर्थात् अलग-अलग प्रान्तों की पुलिस जुदा-जुदा है। प्रान्तीय पुलिस का प्रधान अफसर इन्स्पेक्टर-जनरल कहलाता है। वह आम तौर से इंडियन पुलिस सर्विस का मेम्बर होता है। उसके अधीन डिप्टी इन्स्पेक्टर जनरल होते हैं। ये एक-एक 'रेन्ज' की निगरानी करते हैं, जिसमें आठ-दस ज़िले होते हैं। प्रत्येक ज़िले में एक पुलिस सुपरिंटेन्डेन्ट रहता है यह ज़िले की शान्ति के लिए ज़िला-मजिस्ट्रेट के, तथा अपराधों की खोज और निवारण के लिए डिप्टी इन्स्पेक्टर-जनरल के, अधीन होता है। इसके एक या अधिक सहायक या डिप्टी सुपरिटेंडेंट रहते है।

प्रत्येक ज़िला तीन-चार सर्किलों या हलकों में, और एक हलका ४-५ पुलिस स्टेशन या थानों में, बंटा रहता है। थाने का औसत क्षेत्र-फल २०० वर्ग मील है, इसमें कई पुलिस-चौकियाँ होती हैं। प्रत्येक हल्का एक इन्सपेक्टर के अधीन, और थाना सबइन्स्पेक्टर (थानेदार) के अधीन होता है। सबइन्स्पेक्टर अपराधों की खोज तथा जाँच करता है, और अपने क्षेत्र की शान्ति का उत्तरदाता है; इन्स्पेक्टर

का काम केवल निरीक्षण सम्बन्धी होता है। सबइन्स्पेक्टर के नीचे एक हेड-कान्स्टेबल और कई कान्स्टेबल रहते हैं। शहरों में एक-एक कोतवाल भी होता है। कलकत्ता, बम्बई और मदरास में पृथक् पृथक् पुलिस, कमिश्नरों तथा उनके दो या अधिक सहायकों के अधीन, रहती है। प्रत्येक थाने में कई-कई गाँव होते हैं।

गाँवों में पुलिस का काम चौकीदार करते हैं। जब वहाँ कोई चोरी आदि हो जाती है, तो चौकीदार उसकी सूचना थाने में करता है। थानेदार उसकी आवश्यकता जाँच तथा प्रबन्ध करता है। भारतवर्ष में थानों की संख्या दस हजार, और पुलिस कर्मचारियों की संख्या दो लाख के करीब है। वार्षिक व्यय लगभग ग्यारह करोड़ रुपये होता है।

रेलवे पुलिस का संगठन पृथक् है। इसका ज़िला-पुलिस से कोई सम्बन्ध नहीं है।

जनता के सहयोग की आवश्यकता—पुलिस अपराधियों की खोज या गिरफ्तारी आदि का कार्य अच्छी तरह तभी कर सकती है, जब उसे जनता का यथेष्ट सहयोग प्राप्त हो। परन्तु यहाँ जन-साधारण का उससे सहयोग तो दूर रहा, उलटा वे उसे देख कर ही घबरा जाते हैं। इसका कारण यह है कि अधिकांश पुलिस-कर्मचारी अपने आपको प्रजा का सेवक न समझ कर उस पर अपनी धाक जमाने की फिक्र में रहते हैं। लोगों को डर रहता है कि कहीं पुलिसवाले के पास जाने और उससे बातचीत करने से हम किसी व्यर्थ के झंझट में न फँस जायँ। आवश्यकता है कि पुलिसवाले अपने कर्त्तव्य को समझें। उन्हें ऐसी शिक्षा दी जानी चाहिए कि वे अपने सेवा-कार्य और उत्तरदायित्व को ठीक तरह निभाएँ, वे लोगों से प्रेम और सभ्यता का

व्यवहार करते हुए हर प्रकार उनके सहायक हों। तब ही उन्हें जनता का सहयोग अच्छी तरह मिलेगा, जिसकी बहुत आवश्यकता है।

सड़क के नियम—तुम जानते हो कि पुलिस के सिपाही शहरों में सड़कों के चौराहे पर खड़े हुए यह देखते रहते रहते हैं कि गाड़ी, इक्के, तांगे, साइकल तथा मोटर आदि ठीक नियम से चलते हैं या नहीं, उनसे किसी को चोट-चपेट तो नहीं आती, या कोई लड़ाई-झगड़ा तो नही होता। सड़क सम्बन्धी नियम प्रत्येक नागरिक को जानने चाहिए। हम यहाँ कुछ मुख्य-मुख्य नियम देते हैं :—

(क) पैदल चलने वालों के लिए। (१) जहाँ तक सम्भव हो, हमेशा अपने बायें हाथ को चलना चाहिए। जहाँ सड़क के दोनों ओर पटरी या पगडंडी हो तो उसपर चलना चाहिए। सड़क के बीच में या दायीं ओर को न चलो (२) सड़क पर खड़े होकर कोई काम या किसी से बातचीत न करो। (३) जब सड़क पार करनी हो तो पहले देख लो कि सड़क पर किसी तरफ़ से कोई सवारी तो नहीं आ रही है, यदि आती दिखायी दे तो पहले उसे निकल जाने दो।

(ख) सवारियों के लिए। (१) सड़क पर, अपने बायें हाथ को रहो। (२) बहुत ही आवश्यकता हुए बिना दूसरे से आगे न निकलो। विशेष दशा में जब आगे निकलना ही पड़े तो घंटी या पोंगा बजाकर आगे की सवारी को सूचित करदो। सूचना पाने पर आगेवाली सवारी बायीं तरफ हटकर पीछे आनेवाली सवारी को आगे बढ़ने के लिए रास्ता दे दे। (३) यदि किसी सवारी को रास्ते में, बिगड़ जाने से या किसी विशेष कारण से, रुकना पड़े तो उसे सड़क के बायीं तरफ किनारे पर खड़ा होना चाहिए। (४) बैलगाड़ीवालों को जब मालूम

होता है कि कोई मोटर आ रही है तो उन्हें बहुधा बैलों को रोकने के लिए गाड़ी से नीचे उतरना पड़ता है, जिससे बैल मोटर से भड़क न जायँ। ऐसी दशा में बैलगाड़ीवालों को सड़क के बीच न उतर कर उसके (बायें) किनारे उतरना चाहिये। (५) प्रत्येक सवारीवाले को चौराहे पर खड़े हुये पुलिस के आदमी के संकेतों का ज्ञान होना चाहिए और उसके आदेश का पालन करना चाहिए। (६) दिन छिपते ही प्रत्येक सवारीवाले को अपनी सवारी में रोशनी कर लेनी चाहिए।

छठा पाठ

अदालतें

पिछले पाठ में तुम पुलिस का हाल पढ़ चुके हो। जिस आदमी को पुलिस अपराधी समझकर गिरफ्तार करती है, अथवा जिसपर कोई मनुष्य किसी प्रकार का मुकदमा चलाता है, उसके विषय में यह निश्चय करना होता है, कि वह असल में अपराधी है या निर्दोष; और यदि यह अपराधी है, तो उसे क्या और कितना दंड मिलना चाहिए। यह कार्य पुलिस नहीं कर सकती, इसे न्यायालय या अदालत करती है। इसके लिये खास आदमी रहते हैं, जिन्हें मुन्सिफ़, मजिस्ट्रेट या जज आदि कहते हैं। ये दोनों पक्ष की बातें सुनते हैं, बहुधा ये उनकी बातों के सम्बन्ध में, उनके पेश किये हुये गवाहों के बयान भी सुनते हैं। प्रायः दोनों पक्षवाले अपना-अपना वकील कर लेते हैं। जो अदालत

को उनकी बात कानून की दृष्टि से समझाता है। मुकदमे के बारे में आवश्यक बातें सुनकर अदालत यह फैसला करती है कि जिस आदमी पर अपराध लगाया गया है, वह असल में अपराधी है या नहीं। जिस आदमी को वह अपराधी समझती है, उसे दण्ड देती है। दण्ड देने के विषय में सरकारी कानून की पुस्तकें मौजूद हैं, उनके अनुसार अपराध का विचार किया जाता है।

अदालतों की आवश्यकता—शायद तुम सोचते होगे कि ऐसे कार्य के लिए अदालत की क्या आवश्यकता है। जिस आदमी की कोई हानि हो, या जिसे चोट लगे, वही अपराध करनेवाले को अपनी इच्छानुसार दण्ड दे लिया करे। प्राचीन काल में बहुत से स्थानों में ऐसा ही होता था। पर, इससे बहुत गड़बड़ी मचती थी। उदाहरण के लिए, कल्पना करो राम से मोहन की कुछ हानि होने पर मोहन स्वयं ही उसे दण्ड देने लगे। इस दशा में मोहन को इस बात का पूरा ख्याल रहना कठिन है कि जितनी उसकी हानि हुई है, वह उतना ही दंड (राम को) दे; सम्भव है, वह दंड अधिक ही दे। फिर, राम को दंड चाहे साधारण ही मिले उसे तो यही ख्याल रहेगा कि मुझे दंड अधिक मिला है। इस विचार से, वह तथा उसके रिश्तेदार और मित्र, मोहन से बदला लेने का मौका ढूँढते रहेंगे; और जब ये बदला लेंगे, तो राम और उसके मिलनेवालों का झगड़ा होगा इस प्रकार समाज में द्वेष और कलह बढ़ता ही जायगा। इसलिए पंच, पंचायत या अदालतों द्वारा न्याय करना कराना अच्छा है।

फौजदारी और दीवानी मामले—तुमने कभी-कभी लोगों को यह कहते सुना होगा कि वहाँ फौजदारी या मारपीट हो गयी, या

यह कि उन लोगों का लेन-देन आपस में नहीं निपटा, अब दीवानी में मामला चलेगा। इस प्रकार अदालतों में जो मामले मुकदमे चलते हैं, वे या तो फौजदारी के होते हैं या दीवानी के। इनका भेद उदाहरण द्वारा स्पष्ट हो जायगा। कल्पना करो कि एक आदमी चोरी करता है, या लूट-मार करता है या किसी को गाली देता है। ये अपराध समाज के विरुद्ध माने जा सकते हैं; ऐसा आदमी चाहे जिसका माल-असबाब चुरायेगा, और चाहे जिसे गाली देगा। ऐसे आदमियों से चाहे जिसकी हानि हो सकती है। इस प्रकार के, अर्थात् चोरी या मारपीट आदि के, अपराध फौजदारी के अपराध कहलाते हैं। इनका फैसला फौजदारी अदालतें करती हैं।

अब हम दूसरे प्रकार के अपराधों का उदाहरण लेते हैं। कल्पना करो कि एक आदमी किसी से रुपया उधार लेकर उसे चुकाता नहीं। यह उसी मनुष्य की हानि करता है, जिसने उसे उधार दिया है। समाज के दूसरे आदमी उससे इस प्रकार का व्यवहार न करके, हानि से बचे रह सकते हैं। ऐसे अपराधों को दीवानी अपराध, और इनका फैसला करनेवाली अदालतों को दीवानी अदालतें कहते हैं।

फौजदारी अदालतें—कहीं-कहीं तो एक जिले में, और कहीं-कहीं कुछ जिलों के एक समूह में, एक सेशन कोर्ट या फौजदारी अदालत होती है। इसका प्रधान अधिकारी सेशन जज कहलाता है। यह वही व्यक्ति होता है जो जिला-जज की हैसियत से दीवानी मामलों का निपटारा करता है। सेशन-जज फाँसी का दंड दे सकता है; परन्तु इस दण्ड की मंजूरी उस प्रान्त की ऊँची अदालत अर्थात् हाईकोर्ट आदि से मिल जानी चाहिए।

सेशन जज अपने कार्य में कुछ दूसरे आदमियों की भी सहायता लेता है। ये शहर के अच्छे शिक्षित और विचारवान लोगों में से चुने जाते हैं, इन्हें 'जूरर', तथा इनके समूह को 'जूरी' कहते हैं। साधारण छोटी जगहों में इनके स्थान पर 'असेसर' रहते हैं। सेशन जज इन्हें मुकदमें की सब बात समझाकर इनकी सम्मति लेता है। जूरी की राय तो जज को माननी ही पड़ती हैं, परन्तु असेसरों की राय वह माने या न माने, यह उसकी इच्छा पर रहता है।

मजिस्ट्रेट और उनके अधिकार—सेशन जजों के नीचे पहले, दूसरे और तीसरे दर्जे के मजिट्रेट रहते हैं। पहले दर्जे के मजिस्ट्रेट को दो साल तक की कैद और एक हजार रुपये तक जुरमाना करने का अधिकार होता है। दूसरे दर्जे के मजिस्ट्रेट छः महीने तक की कैद और दो सौ रुपये तक जुर्माना कर सकते हैं; तीसरे दर्जे के मजिस्ट्रेट एक मास की कैद और पचास रुपये तक जुर्माना कर सकते हैं। कुछ शहरों में आनरेरी मजिस्ट्रेट रहते हैं; ये अवैतनिक होते हैं, अर्थात् इन्हें तनख्वाह नहीं मिलती। इनमें से भी किसी को पहले दर्जे के मजिस्ट्रेट के अधिकार होते हैं, किसी को दूसरे दर्जे या तीसरे दर्जे के।

दीवानी की अदालतें—प्रायः हर एक ज़िले में एक जिला-जज होता है। उसकी अदालत जिले में सबसे बड़ी दीवानी अदालत है। उसमें नीचे की अदालतों के फैसलों की अपील हो सकती है। जिला-जज के नीचे 'सबजज' होते हैं। संयुक्तप्रान्त में सबजज को सिविल जज कहते हैं। इसके नीचे मुन्सिफ का दर्जा है। मुन्सिफ़ों के पास आम तौर पर १०००) रु० तक के मुकदमे पेश होते हैं। सबजज की अदालत में बड़ी-से-बड़ी रकम तक का मामला दायर हो सकता है; जिला-

जज की अदालत में १०,०००) रु० से अधिक का मुकदमा दायर नहीं हो सकता।

अपराधियों को दंड—भारतवर्ष की अदालतों में प्रायः ये दंड दिये जाते हैं :— (क) जुरमाना, (ख) बेत या कोड़े लगाना (ग) सादी कैद (घ) सख्त कैद, जिसमें कुछ समय की एकान्त की कैद भी सम्मिलित है, (च) देशनिकाला या कालापानी, और (छ) प्राणदंड या फाँसी। सादी कैदवालों को कुछ काम नहीं करना पड़ता। सख्त कैदवालों को उनके लिए नियत किया हुआ कार्य करना होता है।

दंड देने के चार उद्देश्य होते हैं :—(१) समाज की, अपराधियों से रक्षा करना, (२) जिस व्यक्ति को दंड मिले, उसके आचरण का सुधार करना, (३) दूसरों को शिक्षा देना, जिससे वे ऐसे कार्य न करें, और, (४) जिसकी हानि हुई हो, उसे या उसके सम्बन्धियों को संतोष दिलाना। वर्तमान दंड-व्यवस्था से ये उद्देश्य कहाँ तक सिद्ध होते हैं, इसका विचार तुम बड़े होने पर कर सकोगे।

फैसलों की अपील—यदि कोई मनुष्य मुकदमे के सम्बन्ध में किसी अदालत के फैसले से संतुष्ट न हो तो वह उसका विचार उससे ऊँचे दर्जे की अदालत से करा सकता है। इसे 'अपील करना' कहते हैं। फ़ौजदारी के मुकदमों में, दूसरे और तीसरे दर्जे के मजिस्ट्रेट के फैसले की अपील जिला मजिस्ट्रेट के यहाँ, और पहले दर्जे के मजिस्ट्रेट के फैसले की अपील सेशन जज के यहाँ होती है। 'सेशन जज' के फैसले की अपील प्रान्त के चीफकोर्ट या हाईकोर्ट में होती है। फाँसी की सज़ा पानेवाला आदमी गवर्नर या वायसराय से दया के लिए प्रार्थना कर सकता है।

दीवानी के मुकदमों में मुन्सिफ़ के फैसलों की अपील जिला जज के पास हो सकती है, यह चाहे तो उसे सबजज के पास भेज सकता है। सबजज या जिला जज के फैसलों की अपील, कुछ दशाओं में, हाई-कोर्ट में हो सकती है। कुछ खास हालतों में हाईकोर्ट के फैसलों की अपील देहली के संघ-न्यायालय या लन्दन (इंगलैंड) की 'प्रिवी कौंसिल' तक भी पहुँचती है। इसके विषय में तुम पीछे पढ़ोगे।

रेवन्यू कोर्ट—मालगुज़ारी सम्बन्धी बातों का फैसला करने के लिए कहीं-कहीं 'रेवन्यू कोर्ट' और कहीं-कहीं 'सेटलमेंट (बन्दोबस्त) कमिश्नर' हैं। इनके अधीन कमिश्नर, मजिस्ट्रेट, मुन्सिफ, तहसीलदार आदि रहते हैं, इन्हे मालगुजारी सम्बन्धी फैसला करने के थोड़े-बहुत अधिकार हैं।

भारतवर्ष में मुकद्मेबाजी—एक समय था कि भारत में लोग मुकदमेबाज़ी से बड़ी घृणा या नफ़रत करते थे। अब यह घरों को बरबाद करनेवाला खर्चीला काम दिनोंदिन बढ़ता ही जा रहा है। दीवानी के मुकद्मों की वार्षिक औसत बीस लाख से ऊपर बैठती है, फौजदारी के इससे कम हैं। अदालतों में अनेक मामलों में ठीक न्याय नहीं होता, अपराधी छूट जाता है, और निर्दोष को दंड मिल जाता है। लोगों को चाहिए कि अपना काम शान्ति और ईमानदारी से करें। यदि कभी किसी से झगड़ा हो ही जाय तो जहाँ तक हो सके, उसे आपस में पंच द्वारा, निपटा लें। व्यर्थ मुकदमाबाजी करके धन लुटाने में क्या रखा है! प्रान्तों की कांग्रेस सरकारें पंचायतों का काम बढ़ाने की ओर ध्यान दे रही हैं।

—०—

सातवाँ पाठ

जेल

पिछले पाठ में यह बताया जा चुका है कि अपराधियों को अदालत से किस-किस प्रकार का दंड मिलता है। उनमें से एक दंड, कैद भी है। कैद की सजा पानेवालों के रहने के लिए बस्ती से बाहर खास मकान बनवाये जाते हैं। इन मकानों में कैदी तथा उनका प्रबन्ध करने वाले रहते हैं; दूसरे आदमी वहाँ नहीं रहने पाते। इन मकानों को 'जेल' या 'जेलखाना' कहते हैं। संभव है, तुमने बाहर से किसी जेल की दीवार देखी हो। जेल के चारों ओर की दीवार इतनी ऊँची और मज़बूत इस वास्ते बनायी जाती है कि कैदी उसे फलाँग कर बाहर न निकल सकें।

जेलों के भेद—सब कैदियों की कैद की मियाद बराबर नहीं होती; अपराध के अनुसार किसी को थोड़े समय की कैद होती है, किसी को बहुत समय की। कैद की अवधि के अनुसार अलग-अलग प्रकार के जेलों का प्रबन्ध किया जाता है। जिन जेलों में साल भर या अधिक समय के कैदी रहते हैं, उन्हें 'सेन्ट्रल जेल' कहते हैं। कई-कई ज़िलों के वास्ते एक ही सेन्ट्रल जेल होता है। पन्द्रह दिन से लेकर साल भर तक के कैदी जिला-जेल में रहते हैं। पन्द्रह दिन से कम की सज़ा वाले कैदी छोटी जेल में रहते हैं। इस प्रकार तुम्हें

मालूम हो गया कि जेलों के तीन भेद हैं:—सेन्ट्रल जेल, जिला-जेल, और छोटे जेल।

जेलों का संगठन—जेलों का संगठन और प्रबन्ध प्रान्तवार है। एक प्रान्त के सब जेलों का सबसे उच्च अधिकारी इन्स्पेक्टर-जनरल कहलाता है। प्रत्येक जेल के कैदियों का प्रबन्ध स्वास्थ्य और आचरणादि की देखरेख करने के लिए कुछ कर्मचारी रहते हैं। इनमें से सुपरिन्टैंडैंट जेल के साधारण प्रबन्ध, खर्च, तथा कैदियों की मेहनत और सज़ा की निगरानी करता है। मेडीकल अफसर कैदियों के स्वास्थ्य और चिकित्सा आदि का ध्यान रखने के लिये होता है। 'जेलर' कैदियों के लिए पूर्ण रूप से जिम्मेवर होता है, वह हर समय जेल में अथवा जेल के पास ही रहता है, और कैदियों के लिये आवश्यक प्रबन्ध करता है। वार्डरों अर्थात् जेल के पहरुओं का काम पुराने कैदियों से भी लिया जाता है। जिला-मजिस्ट्रेट अपने ज़िले के जेलों की देख-रेख करता है।

कैदियों का रहन-सहन—प्रायः एक-एक प्रकार के अपराध करनेवाले सब कैदी जेल में इकट्ठे रहते हैं; फौजदारी के एक जगह, दीवानी के दूसरी जगह। स्त्रियों को पुरुषों से अलग रखा जाता है। सख्त कैदवालों को आठ-नौ घंटे काम करना होता है। ये मिट्टी खोदते, मरम्मत करते, आटा पीसते, कोल्हू चलाते, पानी भरते या कोई और काम करते हैं। इन्हें दरी, कालीन, निवाड़ या कपड़ा बुनने का या दूसरी कारीगरी का अभ्यास कराया जाता है, जिससे कैद से छूटने पर ये अपनी आजीविका सहज ही प्राप्त कर सकें, और चोरी या लूट आदि करना छोड़ दें। जो कैदी दिया हुआ कार्य नहीं करते, उन्हें अधिक

सख्त काम दिया जाता है। कभी-कभी उन्हें शारीरिक दंड भी मिलता है। इसी प्रकार, जो कैदी अपना काम अच्छी तरह कर लेते हैं और अफ़सरों को खुश रखते हैं, उनकी कैद की अवधि कम कर दी जाती है।

कुछ समय से सरकार ने कैदियों की हैसियत के अनुसार उनकी तीन श्रेणियाँ करदो हैं : –'ए', 'बी' और 'सी। 'ए' श्रेणीवालों की सुविधाओं का विशेष ध्यान रखा जाता है, वे खाने-पहनने की अच्छी चीज़ों को अपने घर से अथवा अपने खर्च से भी मँगा सकते हैं। 'बी' श्रेणीवालों का दर्जा इनसे नीचा होता है। 'सी' श्रेणी सबसे नीचे की है। अधिकांश कैदी इसी श्रेणी में रखे जाते हैं। इन्हें प्रायः खाने-पीने की अच्छी चीज़ें नहीं मिलतीं, ये उन्हीं वस्तुओं का उपयोग कर सकते हैं जो इन्हें जेल से दी जाती हैं, इनकी शिकायतों पर बहुधा ध्यान नहीं दिया जाता। जेलों में बहुत से राजनैतिक कैदी भी रहते हैं। इन्हें कोई खास सुविधा नहीं दी जाती। प्रान्तों की काँग्रेसी सरकारों ने राजनैतिक कैदियों को रिहा कर दिया है।

छोटी उम्र के अपराधियों का सुधार करना आसान समझा जाता है। इसलिए पन्द्रह वर्ष से कम उम्र के बालक प्रायः किसी 'रिफार्मेटरी' या सुधारशाला में भेज दिये जाते हैं, जिससे शिक्षा पाकर वे कोई उद्योग-धन्धा करने के योग्य बन जायँ।

अपराधियों का सुधार—बहुधा वर्तमान जेल आदि से अपराधियों का विशेष सुधार नहीं होता; इसके विपरीत कुछ आदमी यह दंड भुगतने के बाद और अधिक अपराधी बन जाते हैं। फाँसी की सज़ा से तो अपराधियों का सुधार न होकर उनके जीवन का ही अन्त हो जाता

है। इसलिए कई सभ्य देशों में इस दंड को उठा दिया गया है। अपराधियों का वास्तव में सुधार कैसे हो, यह बहुत गम्भीर और विचारणीय विषय है। बड़े होने पर तुम इस सम्बन्ध में बहुतसी बातें जान सकोगे, तथा स्वयं भी कुछ विचार कर सकोगे।

आठवाँ पाठ

डाक और तार आदि

पाठको! डाक के काम को तो तुम हर रोज देखते हो। इसके प्रबन्ध के कारण, तुम दूर-दूर रहने वाले अपने रिश्तेदारों या मित्रों के पत्र जल्दी और थोड़े खर्च से ही पा लेते हो। तुम्हें उनका समाचार मिल जाता है, और तुम उनके पास अपनी खबर भेज सकते हो। जब किसी आदमी को दूर रहनेवाले अपने किसी भाई-बन्धु या मित्र के सम्बन्ध में कुछ ऐसा समाचार जानना हो कि उसका स्वास्थ्य कैसा है, या वह आपनी परीक्षा में पास हुआ या नहीं तो डाक बाँटने वाले चिट्ठीरसा (पोस्टमैन) की कैसी इन्तजारी की जाती है, यह तुम जानते ही होगे।

पत्रों की यात्रा—चिट्ठियों के एक जगह से दूसरी जगह जाने की क्रिया किस तरह होती है? यह बात एक उदाहरण से तुम्हारी समझ में आ जायगी। दो पैसे का पोस्टकार्ड लेकर, उसमें, जिधर वह कोरा है, उधर अपना समाचार लिख दो, और दूसरी ओर

पत्र पानेवाले का नाम और पता लिख दो। अगर तुम्हें कुछ अधिक समाचार लिखना हो तो इधर भी, आधे हिस्से में दायीं ओर पता लिख कर शेष जगह में तुम समाचार लिख सकते हो। अगर तुम्हें इससे भी अधिक समाचार लिखना हो या तुम यह चाहते हो कि तुम्हारा समाचार कोई दूसरा आदमी न पढ़ सके तो तुम अपना पत्र लिफाफे में बन्द करके भेज सकते हो। डाक का लिफाफा छः पैसे में मिलता है। सादे लिफ़ाफे में भी पत्र जा सकता है; परन्तु उस पर डेढ़ आने का टिकट लगाना होगा। *अच्छा, तुम पोस्टकार्ड या लिफाफे को लेटर-बक्स में डाल दो। निश्चित समय पर डाक के आदमी लेटर बक्स की सब चिट्ठियाँ निकालकर डाकखाने ले जायँगे। वहाँ सब पर टिकट की जगह तारीख और स्थान की मोहर लगायी जायगी, फिर उन्हें थैले में बन्द करके रेलवे स्टेशन पर भेज देंगे। रेलगाड़ी के एक या अधिक डिब्बों में डाक के आदमी रहते हैं, वे एक-एक स्टेशन की चिट्ठियाँ अलग-अलग छाँट लेंगे और क्रमशः उन्हें वहाँ देते जायँगे। स्टेशन से डाक के थैले डाकखाने में पहुँचाये जायँगे। वहाँ चिट्ठियों पर फिर स्थान और तारीख की मोहर लगायी जायगी, पश्चात् पोस्टमैन चिट्ठियों को उन-उन आदमियों में बाँट देंगे, जिन जिन के नाम की वे हैं। जो पत्र किसी गाँव के होंगे, उन्हें गाँव में जाने वाला पोस्टमैन ले जायगा। अब तुम्हारी समझ में आ गया होगा कि चिट्ठियाँ एक जगह से दूसरी जगह कैसे पहुँचती हैं। मोहर को देखकर तुम जान सकते हो चिट्ठी कब चली थी, और कब तुम्हारे यहाँ के डाकखाने आयी।

---

*पिछले योरपीय महायुद्ध से पहले पोस्टकार्ड एक पैसे का और लिफाफा दो पैसे का था।

डाक भेजने के साधन—ऊपर बताया जा चुका है कि डाक भेजने का काम रेल द्वारा होता है। गाँवों में डाक देहाती पोस्टमैन लेजाता है, वह या तो पैदल जाता है, या घोड़े या ऊँट आदि की सवारी पर। इनके अतिरिक्त डाक भेजने के और भी साधन हैं। बहुत सी जगहों में अब मोटर द्वारा ही डाक का काम जल्दी और सुभीते से हो जाता है।

इङ्गलैंड, अमरीका आदि देशों की डाक यहाँ जहाज से आती है। स्थल-मार्ग से उनका भारतवर्ष से सम्बन्ध नहीं है। रास्ते में समुद्र पड़ता है। स्थल-मार्ग से डाक के आने में देर भी बहुत लगती है, इसलिये जहाजों से काम लिया जाता है। अब हवाई जहाजों का प्रचार बढ़ता जा रहा है। इनके द्वारा डाक (तथा अन्य सामान) के आने में जल-मार्ग या स्थल मार्ग का प्रश्न ही नहीं रहता। ये हवा के रास्ते आते हैं और बहुत जल्दी यात्रा तय करते हैं। हाँ, अभी इनके द्वारा डाक भेजने में खर्च बहुत पड़ता है। आशा है धीरे-धीरे उन्नति हो जाने पर वह घटता जायगा।

डाकखाने के अन्य काम—पत्रों की तरह अखबार तथा पुस्तकों आदि के पार्सल भी डाक द्वारा जहाँ-तहाँ भेजे जाते हैं। यही नहीं; डाक से रुपयों का मनीआडर भी भेजा जाता है। मनीआडर भेजनेवाला, एक खास प्रकार का फ़ार्म भरकर, उसे, रुपये सहित अपने यहाँ के डाकखाने में देता है। यह फ़ार्म उस स्थान पर भेज दिया जाता है, जहाँ का इस पर पता होता है। मनीआडर लेनेवाला इस पर दो जगह हस्ताक्षर करके पोस्टमैनों को लौटा देता है, और रुपया ले लेता है; एक हस्ताक्षर डाकखाने में रह जाता है, और दूसरा रुपया भेजनेवाले के पास पहुँचा दिया जाता है। याद रहे कि जब

एक मनीआडर फ़ार्म एक जगह से दूसरी जगह भेजा जाता है तो उसके साथ उसमें लिखी रकम नहीं भेजी जाती। जैसे एक डाकखाने को दूसरे का रुपया देना होता है, वैसे लेना भी तो होता है, क्योंकि मनीआडर जाते हैं, तो आते भी हैं। फिर, प्रत्येक डाकखाने में कुछ रुपया जमा रहता है। कमी-बेशी की रकम इसमें से देकर काम चला लिया जाता है। कुछ समय बाद डाकखाने आपस में लेन देन का हिसाब इकट्ठा चुका लेते हैं। मनीआडर की फीस दस रुपये तक दो आने है। यही दर आगे अधिक रकमों के लिए है। उदाहरणवत ११) से २०) तक के मनीआडर की फीस ।) है। मनीआडर छः सौ रुपये तक का जा सकता है। रुपया भेजने की दूसरी विधि यह भी है। पाँच रुपये या दस रुपये का 'पोस्टल आर्डर' डाकखाने से क्रमशः ५) या १०) देकर खरीदा जा सकता है। इस पर पानेवाले का नाम लिखकर इसे डाक से लिफाफे में भेजा जाता है। इसे पानेवाला डाकखाने में इस पर हस्ताक्षर करके दे देता है, और उसे इसका रुपया मिल जाता है। इसमें फायदा यही है कि लिफ़ाफे में पत्र भी चला जाता है। बड़ी रकम भेजने से फीस में भी किफायत हो जाती है। उदाहरण के लिए पचास रुपये के पोस्टल आर्डर ५०।~) में मिल जाते हैं, ~)॥ लिफाफे का जोड़ कर कुल खर्च ५०।=)॥ होता है, जबकि इतनी रकम मनीआडर से भेजने में ५०॥=) खर्च होते हैं।

डाकखानों में 'सेविंग बैंक' नाम का भी एक खाता रहता है। उसमें आदमी अपना रुपया जमा कर सकते हैं। इस विषय में विशेष 'रुपया पैसा और बैंक' नाम के पाठ में लिखा जायगा।

पोस्टआफिस कैश सर्टिफिकट—डाकखाने में रुपया जमा

करने का एक और भी ढङ्ग है। निर्धारित मूल्य देकर उसके, एक निश्चित अवधि तक के सूद सहित कीमतवाले कागज डाकखाने से खरीदे जा सकते है। यह कागज कैश सर्टिफिकट कहलाते हैं। इनकी कीमत समय-समय पर बदलती रहती है। प्रायः ८।।।-) देकर ऐसे कागज खरीदे जा सकते हैं, जिनकी कीमत ५ साल में १०) हो। रुपया पाच साल से पहले बीच में भी लिया जा सकता है, पर उस दशा में सूद बहुत कम मिलता है, और पहले साल के अन्दर तो बिलकुल ही नहीं मिलता।

रजिस्टरी और बीमा—डाक से जो चिट्ठी या पारसल आदि जाता है, उसके साधारण महसूल के अलावा अगर तुम उस पर तीन आने का टिकट और लगा दो तो उसकी रजिस्टरी हो जाती है। डाकखाने उसका अधिक अहतयात करते हैं। यदि तुम चाहते हो कि तुम्हें उसके पानेवाले के हाथ की रसीद मिल जाय तो तुम रजिस्टरी करने के अतिरिक्त एक आने का टिकट और लगाओ तथा एक 'एकनालेजमेंट' फार्म भर कर डाकखाने में दे दो। यह फार्म तुम्हारे पास, पानेवाले के हस्ताक्षर होकर, आ जायगा। अगर तुम अपनी भेजी जानेवाली वस्तु की और अधिक रक्षा या हिफाजत चाहते हो तो तुम उसका बीमा करा सकते हो। सौ रुपये तक के बीमे के लिए चार आने का टिकट और ज्यादा लगेगा। यदि संयोग से बीमे की वस्तु खो जाय और उसका पता न लगे तो डाकखाना तुम्हें उतनी रकम का देनदार होगा, जितनी का तुमने बीमा कराया है।

तार—यदि कहीं कुछ समाचार तुरन्त ही पहुँचाना हो, तो तार भेजा जा सकता है। तार से मिनटों में खबर कहीं-से-कहीं जा सकती

है। हाँ, यह जरूर है कि डाक की अपेक्षा इसमें खर्च अधिक होता है। तथापि, हर रोज देश में हजारों तार आते-जाते हैं। समाचारपत्रों को दूर-दूर की ताज़ी खबरें छापने के लिए तारों से बड़ा सुभीता है। तार से व्यापारियों को भी बड़ा लाभ होता है। व्यापारी तार द्वारा दूर देशों में माल का भाव ठहरा लेता है और क्रय-विक्रय (खरीद-बेच) झटपट हो जाता है। जरूरत होने पर तार द्वारा रुपयों का मनीआर्डर भी भेजा जाता है। इसमें रुपया भेजनेवाले के भरे हुए फार्म का इन्तजार नहीं किया जाता। जब एक डाकखानेवाले दूसरे डाकखाने के अधिकारियों से तार द्वारा, किसी को रुपया देने की सूचना पाते हैं, वे उसे रुपया दे देते हैं। तार विभाग से राज्य-प्रबन्ध में भी बड़ी सुविधा होती है। भिन्न-भिन्न स्थानों के अफसर तार द्वारा सलाह-मशवरा कर सकते हैं; और आवश्यकतानुसार सेना या पुलिस तथा अन्य जरूरी सामान भेजने के लिए कहा जा सकता है। तार की दर और नियम आगे दिये जायँगे।

डाक और तार विभाग का संगठन—भारतवर्ष में डाक और तार का एक ही विभाग है. उसका देश भर में सबसे बड़ा अधिकारी 'डायरेक्टर जनरल' कहलाता है। इस विभाग के प्रबन्ध के लिए यह देश कुछ 'सर्कलों' में और प्रत्येक सर्कल कुछ डिवीज़नों में बँटा हुआ है। सर्कल के अधिकारी को 'पोस्टमास्टर-जनरल' और डिवीज़न के अधिकारी को सुपरिन्टेंडेंट कहते हैं। हर एक सुपरिन्टेंडेंट के नीचे कुछ इन्स्पेक्टर रहते हैं जो कई-कई जिलों के डाकखानों का निरीक्षण करते हैं। प्रत्येक जिले में एक बड़ा डाकखाना होता है उसका मुख्य अधिकारी पोस्टमास्टर कहलाता है। उसके नीचे ज़िले में कुछ सब पोस्टआफ़िस और 'ब्राँच पोस्टआफिस' भी होते हैं। बड़े बड़े गाँवों में

डाकखाने हैं, उनका काम प्रायः वहाँ के मुख्याध्यापक ही करते हैं, उन्हें इस काम के लिये कुछ भत्ता (अलाउँस) मिलता है।

भारतवर्ष में अभी बहुत से स्थानों में डाकखाने नहीं हैं। कितने ही स्थान ऐसे हैं, जहाँ से डाकखाना कई-कई मील दूर है और डाक हफ़्ते में केवल एक या दो दिन जाती है। इसलिए देश में बहुत से नये डाकखाने खोले जाने की ज़रूरत है। इधर कुछ समय से, पोस्टकार्डों और लिफाफ़ों का मूल्य, तथा डाक और तार सम्बन्धी अन्य महसूल बढ़ जाने से सर्वसाधारण को बहुत असुविधा हो गयी है। इसमें सुधार की आवश्यकता है।

डाक और तार सम्बन्धी नियम— डाक तथा तार सम्बन्धी कुछ मुख्य-मुख्य नियम ये हैं:—डाकखाने प्राय: दस बजे से चार बजे तक खुले रहते हैं, कहीं-कहीं उनका समय सवेरे सात बजे से दोपहर तक तथा दो से चार बजे तक होता है। इतवार और खास-खास त्योहारों की छुट्टियाँ रहती हैं। अन्य दिनों में मनीआडर प्रायः तीन बजे तक लिए जाते हैं, हाँ शनिवार को मनीआडर एक बजे तक, तथा पत्रों, पेकटों और पार्सलों की रजिस्टरी तीन बजे तक हो सकती है। 'लेट फी' का एक आने का टिकट लगाकर पत्रों की, तथा दो आने का टिकट लगाकर पेकटों की, रजिस्टरी शनिवार के दिन चार बजे तक भी हो सकता है। आध आना 'लेट फी' टिकट लगा कर पत्र डाकखाने में डाक के साधारण समय के बाद भी, दिये जा सकते हैं, और एक आना 'लेट फी' टिकट लगाकर स्टेशन पर डाक-गाड़ी के समय भी भेजे जा सकते हैं।

छपनेवाली चीज़ (प्रेस मेटर), बीजक, बिल, आर्डर, पुस्तक,

सूचीपत्र, विज्ञापन, आदि 'बुक-पोस्ट' में जा सकते हैं। इनका पैकेट इस तरह बनाया जाना चाहिए कि सिरे खुले रहें जिससे डाकखानेवाले चाहें तो इस बात की जाँच कर सकें कि इसके अन्दर कोई निजी पत्र आदि तो नहीं है। 'बुक-पोस्ट' पैकेट का महसूल इस समय पाँच तोले तक के लिए तीन पैसे, और उससे ऊपर प्रत्येक ढाई तोले एक पैसा है। सामयिक (दैनिक, अर्द्धसाप्ताहिक, साप्ताहिक पाक्षिक मासिक आदि) पत्र-पत्रिकाओं के रजिस्टर्ड होने पर, उनका महसूल आठ तोले तक पैसा और उससे ऊपर बीस तोले तक दो पैसे होता है। वह जिस डाकखाने से रजिस्टर्ड होगा, उसी डाकखाने में उसपर यह महसूल लगेगा, अन्य डाकखानों में उस पर बुक-पोस्ट के हिसाब से महसूल देना होगा।

कार्ड, लिफ़ाफा, पैकेट, या समाचारपत्र बिना टिकट या कम टिकट लगाकर भेजने से 'बैरंग' कर दिया जाता है, इस दशा में जितना टिकट कम होगा, उसका दूना महसूल उस पत्र आदि के पानेवाले से लिया जायगा। यदि बैरंग पत्र आदि को वह आदमी लेना स्वीकार न करे, जिसका उस पर पता है तो उसे भेजनेवाले के पास लौटा कर, दूना महसूल उससे लिया जाता है। यदि वह मसूल न चुकाये तो उसकी सब डाक (पत्र, मनीआर्डर आदि) महसूल चुकाये जाने तक रोक रखी जायगी।

पुस्तकें आदि चारों तरफ़ से अच्छी तरह बन्द करके भी डाक से भेजी जाती हैं। बहुमूल्य कागज़ात, वस्त्र, आभूषण आदि को उनके ऊपर कपड़ा सीकर भेजा जाता है। इन पार्सलों का महसूल प्रथम चालीस तोले तक छः आने और फिर प्रत्येक चालीस तोले पर चार आना है। पार्सल के भीतर निजी पत्र रखा जा सकता है। इसका पूरा

महसूल इसे भेजनेवाले को ही देना पड़ता है वह चाहे तो इसकी रजिस्टरी तथा बीमा भी करा सकता है, अथवा बिना रजिस्टरी (अन-रजिस्टर्ड) ही भेज सकता है।

यदि पत्र आदि भेजनेवाला यह कहता है कि उसका पत्र नियत स्थान पर पहुँचने के बाद पाने वाले को तुरन्त मिल जाय तो उस पत्र पर दो आने का टिकट अधिक लगाना होता है। ऐसे पत्र पर 'एक्सप्रेस डिलीवरी' की एक लाल चिट चिपकादी जाती है यह पत्र अपने स्थान पर साधारण डाक के साथ ही पहुँचता है, परन्तु इसके दिये जाने की व्यवस्था पहले कर दी जाती है।

डाक में चिट्ठी आदि डालने की भी रसीद मिल सकती है। उसे 'सर्टिफिकट-आफ़-पोस्टिंग' कहते हैं। साधारण बोलचाल में इसे कच्ची रजिस्टरी कहते हैं। इसके लिये छपे हुये फार्म होते हैं, फार्म न होने पर सादे कागज पर चिट्ठी आदि के पानेवाले का पता लिखकर दे देने से भी काम चल सकता है। इस रसीद के लिए, तीन पत्रों या पेकटों तक के लिए दो पैसे का टिकट लगाना पड़ता है। डाक कर्मचारी उस पर मोहर लगा देता है। इससे पत्र आदि भेजनेवाले के पास इस बात का सबूत रहता है कि उसने डाक में पत्र डाला। परन्तु डाकखाना इसके लिए कोई विशेष जिम्मेवारी नहीं लेता।

डाकखाने से पैकेट या पार्सल वी० पी० से भी जाते हैं। डाक-महसूल तथा रजिस्टरी-खर्च सहित जितना मूल्य किसी चीज़ का लेना होता है, उतने की वी० पी० की जाती है। इसके लिए एक फार्म भरकर देना होता है। डाकखाना उस चीज़ को पानेवाले के पास पहुँचा देता है, और उससे वी० पी० की रकम तथा उसका मनीआडर-शुल्क

लेता है। वी० पी० की रकम चीज़ भेजनेवाले को मिल जाती है, मनी-आडर डाकखाने में रह जाता है। जिसके पास वी० पी० भेजी जाती है, अगर वह उसे लेने से इनकार करता है तो वी० पी० की वस्तु भेजने-वाले को लौटा दी जाती है। इस दशा में डाक-महसूल तथा रजिस्टरी खर्च के टिकट रद्द हो जाने से भेजने वाले को इतना नुकसान सहना पड़ता है।

तार दो प्रकार का होता है—साधारण और एक्सप्रेस (अरजेंट या अत्यावश्यक)। साधारण तार का शुल्क आठ शब्दों तक के लिए बारह आने है, और उनके बाद प्रतिशब्द एक आना है। एक्सप्रेस तार का महसूल इससे दूना होता है। जवाबी तार देने के लिए जवाब का महसूल पहले जमा कराना होता है, इस पर पानेवाले को तार के साथ उत्तर के लिए फार्म दिया जाता है। अगर वह तीन महीने इस फार्म का उपयोग न करे तो दरख़ास्त देने पर उसे उसका दाम वापिस मिल जाता है।

समाचार पत्रों के लिए तार का शुल्क ४८ शब्दों तक के लिए आठ आना और इसके बाद प्रति ६ शब्दों के लिए एक आना है।

अगर किसी आदमी को यह शिकायत हो कि डाकखाने या तार-घर में उसका काम ठीक नहीं हुआ, उसकी चिट्ठी या तार देर में मिला अथवा मनीआडर का रुपया नहीं आया, तो वह इस बात की शिकायत एक आने के टिकट लगाकर डाकखाने के पोस्टमास्टर को कर सकता है। उस पर आवश्यक कार्रवाई की जायगी।

बेतार-का-तार या टेलीफोन—भारतवर्ष के प्रसिद्ध नगरों में बेतार-के-तार या 'वायरलेस' का भी प्रबन्ध है। इसके द्वारा इन

नगरों में तथा अन्य देशों के प्रधान नगरों में, बहुत जल्द समाचार आ जा सकता है। समुद्र-पार के स्थानों में अथवा समुद्र में एक जहाज़ से दूसरे जहाज़ पर समाचार भेजने के लिए बेतार-का-तार ही काम में लाया जाता है। अब रेडियो द्वारा समाचार भेजने की ऐसी अच्छी व्यवस्था हो गई है। कि एक वक्ता का भाषण, दूसरे आदमी हज़ारों मील के फ़ासले पर अपने-अपने घरों में, इस यंत्र के पास बैठे हुए साफ़-साफ़ सुन सकते हैं।

आज कल 'टेलीफ़ोन' का भी प्रचार बढ़ता जा रहा है। इसका अधिकतर सम्बन्ध एक ही देश के अन्दर भिन्न-भिन्न स्थानों से, या एक-एक नगर के ही भीतर रहता है। बड़े-बड़े शहरों में, एक जगह से दूसरी जगह जाने-आने में काफ़ी समय लगता है, और काम-काजी आदमियों को फ़ुरसत बहुत कम मिलती है। टेलीफोन के द्वारा आदमी अलग-अलग स्थानों में, अपनी-अपनी दुकान या दफ़्तर आदि में बैठे हुए कई-कई मिनट तक लगातार बातचीत कर सकते हैं। बेतार-के-तार और टेलीफ़ोन के नियम तुम पीछे जान लोगे।

नवाँ पाठ

रेल और मोटर

पिछले पाठ में तुम पढ़ चुके हो कि रेल और मोटर आदि से डाक के काम में बड़ी सहायता मिलती है। इनका प्रचार हो जाने से आजकल दूर-दूर के स्थानों में यात्रा करने की बड़ी सुविधा हो गयी

है। पहले आदमी पैदल जाते थे, या घोड़ों या ऊँट पर सवार होकर या बैलगाड़ी और घोड़ागाड़ी आदि में। इसमें सफर तय करने में समय बहुत लगता था, तथा थकावट अधिक होती थी। अब साइकल, ट्रामवे आदि अनेक सवारियाँ चल पड़ी हैं। हवाई जहाज़ों का भी प्रचार बढ़ता जा रहा है। परन्तु सर्वसाधारण के लिए, लम्बी-लम्बी यात्रा करने की अन्य सवारियों में इतनी सुविधा नहीं होती, जितनी रेल और मोटर में। इस पाठ में इनका वर्णन करना है। पहले रेलों के बारे में विचार करते हैं।

रेल से यात्रा—तुम हर रोज़ रेलवे स्टेशन पर देखते होगे कि हज़ारों आदमी रेल का टिकट लेकर एक जगह से दूसरी जगह आते-जाते हैं। प्रत्येक टिकट पर यह छपा रहता है कि वह किस स्टेशन से, किस स्टेशन तक के लिए है; और उसका मूल्य क्या है। टिकट खो जाय तो नम्बर और तारीख बताने से उसका काम चल सकता है; नहीं तो उसके दाम फिर भरने पड़ते हैं।

रेलों से अन्य लाभ—स्टेशनों पर सवारी-गाड़ी के अलावा तुमने मालगाड़ियाँ भी देखी होंगी। इनमें हज़ारों मन माल इधर से उधर भेजा जाता है। इस प्रकार रेलों से व्यापार की खूब वृद्धि होती है। यदि देश में एक जगह अकाल पड़ रहा हो तो खाने के पदार्थ दूसरी जगह से, जहाँ वे अधिक हों, जल्दी ही उस जगह लाये जाकर, बहुत-से आदमियों को भूखा मरने से बचाया जा सकता है।*

---

* रेलों से एक हानि भी है; बहुत से पदार्थों को व्यापारी उन देशों में भेज देते हैं, जहाँ वे महँगे हों: फिर वे पदार्थ हमारे देश में पहले की तरह सस्ते नहीं रहते; बहुत माल विदेशों में चले जाने के कारण, यहाँ उसका भाव चढ़ जाता है।

रेलों द्वारा सरकार को राज्य-प्रबन्ध के लिए पुलिस या फौज एक जगह से दूसरी जगह भेजने में भी बड़ी सुविधा तथा किफ़ायत होती है। इसके अलावा रेलों से मनुष्यों के विचारों तथा रहन-सहन पर भी बड़ा प्रभाव पड़ता है। देश के जिन भागों में रेल चलती है, वहाँ के लोगों को एक दूसरे से मिलने का अवसर बहुत आता है। भिन्न-भिन्न जातियों के, तथा अलग-अलग धर्मों को माननेवाले, आदमी परस्पर में मिलने-जुलने से एक-दूसरे को अधिक जानने लगते हैं, और, उनमें सहयोग और सहानुभूति का भाव बढ़ जाता है। भारतवर्ष में छूतछात के विचारों को दूर करने में रेलों से बड़ी सहायता मिली है। रेलों में पास-पास बैठने के कारण, अब भिन्न-भिन्न जातियों के आदमियों को एक-दूसरे से पहले जैसा परहेज़ नहीं रहा।

रेलों का विस्तार—भारतवर्ष में रेलों का काम, लगभग सौ वर्ष हुए, आरम्भ हुआ था। अब लगभग पचास हज़ार मील रेलवे लाइन है। बहुत सी रेलवे लाइनों की मालिक सरकार है, कुछ अलग-अलग कम्पनियों की हैं, कुछ देशी राजाओं की हैं तथा थोड़ी सी लाइन ज़िला-बोर्डों की बनवाई हुई है। रेलवे लाइनों की चौड़ाई भिन्न भिन्न स्थानों में अलग-अलग है। छोटी लाइनें दो ढाई फुट की और बड़ी लाइनें ५ से ५॥ फुट तक की हैं।

रेल सम्बन्धी मुख्य-मुख्य नियम—प्रत्येक रेलवे लाइन का अलग-अलग तथा सब रेलों का इकट्ठा 'टाइमटेबिल' बड़े-बड़े स्टेशनों पर मोल मिलता है। उसमें रेल-सम्बन्धी नियम ब्योरेवार दिये होते हैं तथा यह भी लिखा रहता है कि कौनसी गाड़ी किस स्टेशन पर किस समय पहुँचती है और कितनी देर ठहरती है, और भिन्न-भिन्न स्टेशनों

कितने मील का फासला है। हम यहां पर पाठकों की जानकारी के लिये कुछ थोड़े से मुख्य-मुख्य नियम देते हैं :—

जो आदमी रेल में सफर करना चाहे, उसे रेलवे टिकट लेना चाहिए। गाड़ी न मिलने या उसमें जगह न रहने के कारण अगर कोई आदमी टिकट लेकर गाड़ी में न बैठ सके तो उसे चाहिए कि टिकट वापिस करदे और टिकट का मूल्य वापिस लेने के लिये दर्ख्वास्त दे दे। तीन वर्ष तक के बच्चों के लिये टिकट लेने की आवश्यकता नहीं है और तीन वर्ष से ग्यारह वर्ष तक के बालकों के लिए आधा टिकट लेना काफ़ी है। टिकट उसके खरीदने के दिन, या उसकी मिय़ाद के भीतर ही काम आ सकता है। बिना टिकट सफ़र करनेवालों से पूरा किराया तथा जुरमाना (जो टिकट के मूल्य का दूना हो सकता है) वसूल किया जाता है या, उन्हें दूसरा दण्ड दिया जाता है।

यात्रा करनेवाले को चाहिए कि गाड़ी के समय से इतना पहले स्टेशन पर आवे कि शान्ति से टिकट लेकर गाड़ी में बैठ सके। यदि कभी संयोग से टिकट न लिया जा सके तो वह गार्ड को सूचना देकर गाड़ी में बैठ सकता है। इस दशा में, उससे आगे स्टेशन पर साधारण किराया ही लिया जायगा, जुरमाना आदि नहीं।

अगर गाड़ी में बहुत भीड़ हो तो मुसाफ़िर गार्ड से कहकर, जिस दर्जे का उसने टिकट लिया है उससे ऊपर के दर्जे में बैठ सकता है। उस दर्जे का किराया, जितना वह उस टिकट के मूल्य से अधिक हो, उतरनेवाले स्टेशन पर दे देना चाहिए। सब मिलाकर रेल में चार दर्जे होते हैं। सबसे निचला दर्जा तीसरा (थर्ड क्लास) होता है, उससे

ऊपर ड्योढ़ा (या इंटर), फिर दूसरा दर्जा (सेकिंड क्लास) और सबसे ऊँचा दर्जा अव्वल दर्जा (फ़स्ट क्लास) होता है। टट्टी या पेशाब के लिए सभी दर्जों में व्यवस्था होती है। तीसरा दर्जा मामूली होता है ड्योढ़े दर्ज़े में भीड़ कम रहती है। दूसरे तथा अव्वल दर्ज़े में तो सोने के लिए भी खूब जगह होती है, बैठने या लेटने की जगह गद्दी रहती है, बिजली के पंखे तथा स्नान आदि की भी व्यवस्था रहती है। इन दर्जों के टिकटों का किराया उत्तरोत्तर अधिक है। रेल-किराया समय-समय पर बदलता रहता है। तीसरे दर्जे का यात्री अपने साथ १५ सेर वज़न का सामान बिना महसूल ले जा सकता है, ड्योढ़े दर्जेवाला ३० सेर, दूसरे दर्जेवाला ४० सेर और अव्वल दर्जे वाला ६० सेर। इससे अधिक वज़न होने पर उसका महसूल पेशगी ही देना होता है। अन्यथा मार्ग में जाँच होने पर उससे दूना भाड़ा वसूल किया जाता है। यात्रियों को चलती गाड़ी में फाटक खुला नहीं रखना चाहिए। खिड़की पर झुकना तथा सिर बाहर निकालना भी ठीक नहीं है। यदि कोई आदमी अपने पास बैठे हुए यात्रियों की इच्छा के विरुद्ध या उनके मना करने पर भी तम्बाकू पिये तो उसपर जुरमाना हो सकता है। यदि कोई आदमी नशा किए हुए हो, या अन्य यात्रियों को कष्ट पहुँचाता हो तो उसे दंड दिया जायगा।

चलती गाड़ी में कोई खतरा हो, कोई दुष्ट बदमाशी करे, या भीड़ इतनी अधिक हो कि स्वास्थ्य बिगड़ने की आशंका हो, तो जंजीर खींच लेनी चाहिए। इस पर जब गाड़ी रुक जाय तो गार्ड से सब बात कह देनी चाहिए। अत्यन्त आवश्यकता बिना जंजीर नहीं खींचनी चाहिए। जब गाड़ी स्टेशन पर ठहरी हो, यदि उस समय गाड़ी में बैठे हुए किसी

आदमी के बारे में कुछ शिकायत करनी हो तो स्टेशन-मास्टर से शिकायत करनी चाहिए।

कुछ रेलवे लाइनों पर ख़ास-ख़ास दिनों में, या विशेष त्योहारों आदि के अवसर पर वापसी टिकट दिये जाते हैं। इनके मूल्य में कुछ रियायत रहती है। कुछ रेलवे लाइनें चार या अधिक विद्यार्थियों या खेलनेवालों से इकट्ठा टिकट लेने पर कुछ इसी प्रकार की रियायत करती हैं। ऐसी यात्रा के टिकट 'कन्सेशन टिकट' या रियायती टिकट कहलाते हैं। ऐसे टिकटवालों को एक खास मियाद के अन्दर अपने स्थान पर वापिस आजाना चाहिए। [युद्ध-काल में ऐसे टिकट बन्द कर दिये जाते हैं।]

साधारण सवारी-गाड़ियों के अलावा एक्सप्रेस या डाकगाड़ी से भी यात्रा होती है। प्रायः इनके तीसरे दर्जे के टिकट का मूल्य सवारी गाड़ी के तीसरे दर्जे के टिकट से कुछ अधिक रहता है। गाड़ी या डिब्बा 'रिज़र्व' भी कराया जा सकता है, उसमें वही आदमी बैठते हैं, जिनके लिए वह रिज़र्व कराया जाता है। रिज़र्व कराने के लिए २४ घटे पहले रेलवे ट्रैफिक मेनेजर के पास दर्खास्त दी जाती है।

रेलगाड़ी से सामान या माल भी भेजा जाता है। बड़े-बड़े पार्सल डाक से भेजने में बहुत खर्च पड़ता है, उन्हें सवारी-गाड़ी से भेजने में किफायत होती है। मालगाड़ी से भेजने में किराया और भी कम लगता है; इससे माल सवारी-गाड़ी की अपेक्षा देर में पहुँचता है। यह बात माल भेजनेवाले की इच्छा पर निर्भर है कि वह माल का रेल-किराया स्वयं दे या उसके चुकाने का भार माल पानेवाले पर डाले। माल भेजनेवाले को रेलवे रसीद मिलती है, जिसे 'बिल्टी' कहते हैं।

यह बिल्टी वह डाक से भेजता है; सादे लिफाफे में, बैरंग, रजिस्टरी या वी० पी० से। बिल्टी पानेवाला इसे दिखाकर अपना माल ले सकता है। अगर इसका महसूल पहले नहीं चुकाया गया है तो उसे महसूल चुकाना होता है। जिस समय माल स्टेशन पर पहुँचे, उसके ४८ घंटे के भीतर उसे छुड़ा लिया जाना चाहिए। देरी करने से 'डेमरेज' या हरजाना देना पड़ता है। डेमरेज सवारी गाड़ी के पार्सलों पर प्रति दिन दो आना, और मालगाड़ी से आने वाले माल पर वज़न के अनुसार लिया जाता है।

यदि किसी रेलवे कर्मचारी के बारे में, या रेल सम्बन्धी कोई अन्य शिकायत करनी हो तो रेलवे ट्राफिक मैनेजर के पास करनी चाहिए।

मोटर—यह तो बताया ही जा चुका है कि मोटरों का प्रचार क्रमशः बढ़ रहा है। पहले इन्हें धनवान लोग अपने निजी काम के लिए रखा करते थे। वे ही इनमें सवार होते थे, परन्तु अब तो ये किराये पर भी चलने लगी हैं। और, यह एक रोज़गार हो गया है। मोटरों द्वारा लोगों की यात्रा ही नहीं होती, सामान भी ढोया जाता है। प्रायः इसमें महसूल या किराये की दर रेल के बराबर ही रहती है। इनमें लोगों को यह सुभीता रहता है कि अपने शहर से बैठ गये और दूसरे शहर के पास ही जा उतरे, अर्थात् उन्हें रेलवे स्टेशन तक (जो प्रायः बस्ती से दूर होता है) जाना-आना नहीं पड़ता। अभी रेलों का प्रचार बहुत कम है। गाँवों का तो कहना ही क्या, अनेक नगर और क़सबे ऐसे हैं, जहाँ रेल नहीं पहुँचती; वे कहीं-कहीं रेलवे स्टेशनों से दर्जनों ही नहीं, सैकड़ों मील दूर हैं। ऐसे स्थानों में, यदि सड़कें ठीक हों, तो मोटरों से अच्छी तरह काम लिया जा सकता है।

जिन स्थानों में रेल जाती हैं, वहाँ भी बहुधा आमदरफ्त बढ़जाने के कारण मोटरें खूब चलती हैं। उदाहरणतः देहली से आगरा, अलीगढ़, मथुरा, बुलन्दशहर, रोहतक, मेरठ, रिवाड़ी आदि को नित्य बहुत सी मोटरें जाती हैं।

मोटर चलाने के लिए सरकारी लैसेंस (अनुमति) लेना आवश्यक है। मोटर चलानेवाला सिर्फ उन्हीं सड़कों या रास्तों पर अपनी मोटर ले जा सकता है, जहाँ के लिए उसने लैसेंस ले रखा हो। प्रत्येक मोटर में बैठनेवालों की संख्या निश्चित की हुई रहती है। उससे अधिक बैठने पर मोटरवाले को दंड होता है। सरकार की ओर से इस बात की व्यवस्था रहती है कि मोटर चलानेवाले मोटर सम्बन्धी नियमों का यथोचित पालन करें; कुछ नियम पाँचवे पाठ के अन्त में दिये जा चुके हैं। कुछ स्थानों में सरकार की ओर से मोटर चलाने की व्यवस्था हो रही है।

दसवाँ पाठ

शिक्षा

शिक्षा का महत्त्व—पाठको! तुम इस पुस्तक में पुलिस, अदालतों और जेलों का हाल पढ़ चुके हो। देश की शान्ति के लिए इनकी बहुत ज़रूरत है। परन्तु, देश की उन्नति के लिए यह भी आवश्यक है कि लोगों में विविध विषयों के ज्ञान का प्रचार हो। इस वास्ते स्थान-स्थान पर लड़के और लड़कियों के लिए स्कूल आदि होने चाहिए, जिनमें शिक्षा पाकर वे न केवल लिखना-पढ़ना सीखें, वरन्

ईमानदारी से अपना निर्वाह भी करने लग जायँ; वे अपनी मानसिक और शारीरिक उन्नति के साथ, नैतिक उन्नति भो कर के; वे अपने कर्त्तव्यों को समझें और एक-दूसरे के साथ मिलकर, सहानुभूति और सहयोग का भाव रखते हुए, रहा करें। ऐसी शिक्षा पाये हुए आदमी चोरी या लूट मार आदि नहीं करते। वे देश की सुख-शांति में सहायक होते हैं, और सुयोग्य नागरिक बन जाते हैं। कहा है कि एक स्कूल को खोलना कई जेलों को बन्द करना है।

आधुनिक शिक्षा—प्राचीन काल में भारतवर्ष अपने ज्ञानभंडार के लिए प्रसिद्ध रहा है। यहाँ प्रत्येक ग्राम में ऐसी पाठशालाएँ थीं, जिनमें जन-साधारण के बालक बिना कुछ खर्च किये, अपने गुरू के पास रहते और शिक्षा पाते थे। परन्तु इस समय यहाँ शिक्षित व्यक्ति बहुत कम हैं; सब स्त्री पुरुष मिलाकर केवल बारह फी सदी ही कुछ पढ़ना लिखना जानते हैं। आज कल यहाँ अधिकतर शिक्षा-कार्य पर सरकारी देख-रेख है। आधुनिक शिक्षा-संस्थाओं के मुख्य भेद ये हैं:—१—प्राइमरी स्कूल। २—सैकिंडरी या माध्यमिक स्कूल। ३—कालिज या महाविद्यालय। ४—उद्योग-धन्धों के स्कूल और कालिज। अब हम इन संस्थाओं में मिलनेवाली शिक्षा के विषय में कुछ मुख्य-मुख्य बातें बतलाते हैं।

प्रारम्भिक शिक्षा—प्राइमरी स्कूल बहुत से बड़े-बड़े गाँवों तथा सब शहरों में हैं। इनमें हिन्दी, बँगला, मराठी, आदि देशी भाषाओं में लिखना-पढ़ना तथा कुछ भूगोल और हिसाब सिखाया जाता है। इनकी पढ़ाई प्रायः चार वर्ष की होती है। तुम्हारे ग्राम या नगर में ये स्कूल होंगे, तुम इनकी शिक्षा पा चुके हो, इसलिए इनका हाल

तुम्हें मालूम ही होगा। यह और जान लेना चाहिए कि गाँव के प्राइमरी स्कूल ज़िला-बोर्ड (या ज़िला-कौंसिल) के खर्च से, और शहरों के स्कूल म्युनिसपैलटियों के खर्च से चलते हैं। कुछ शहरों में म्युनिसपैलटियों ने अपने-अपने नगर के सब या कुछ मोहल्लों के लड़कों के लिये यह निमम कर दिया है कि वे प्रायः छः वर्ष की उम्र से लेकर दस वर्ष की उम्र तक अवश्य ही पढ़ें। यदि उन स्थानों के ऐसी उम्र के बालक पढ़ने न जायँ तो उनके माता-पिता आदि को चेतावनी दी जाती है; अथवा, कुछ दशाओं में उन पर जुरमाना भी होता है। जहाँ ऐसा नियम होता है, वहाँ शिक्षा अनिवार्य या लाज़मी कही जाती है। ऐसा नियम तभी किया जाता है, जब पढ़नेवाले को कुछ फ़ीस देनी न पड़े; क्योंकि, बहुत से आदमी फीस का भार नहीं सह सकते। भारत वर्ष के देहातों में शिक्षा अनिवार्य और निश्शुल्क (मुफ़्त) नहीं हुई है; शहरों में भी यह काम होना, अभी बहुत कुछ शेष है।

माध्यमिक शिक्षा—प्राइमरी स्कूल की पढ़ाई कर चुकने पर विद्यार्थी वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूल में दाखिल हो सकता है। उसकी पढ़ाई समाप्त करके, तथा अंगरेज़ी मिडल क्लास की अंगरेजी को पढ़ाई पूरी करके, 'हाई स्कूल' में प्रवेश कर सकता है। अथवा यदि विद्यार्थी चाहे तो वह प्राइमरी क्लास पास करके अंगरेज़ी मिडिल स्कूल में जा सकता है, और उसकी शिक्षा पूरी करके फिर हाई स्कूल में प्रवेश कर सकता है। हाई स्कूलों में शिक्षा प्रायः देशी भाषाओं द्वारा दी जाती है। हाई स्कूल की अंतिम परीक्षा को एंट्रेंस, मेट्रीक्यूलेशन, स्कूल-लीविंग, या 'हाई स्कूल सर्टीफिकेट' परीक्षा कहते हैं। यदि विद्यार्थी लगातार पास होता रहे तो उसको आरम्भ से इस परीक्षा तक दस-ग्यारह

वर्ष लगते हैं। कुछ प्रान्तों में मिडल और हाई स्कूल की शिक्षा का क्रम निश्चित करने और इनकी अन्तिम परीक्षा लेने का प्रबन्ध करने के लिए हाई-स्कूल बोर्ड बनाये गए हैं।*

उच्च शिक्षा—हाई स्कूल की अंतिम परीक्षा पास कर चुकनेवाले विद्यार्थियों के लिए कालिजों में उच्च शिक्षा का प्रबन्ध किया गया है। कालिज में पढ़ानेवाले को प्रोफेसर कहते हैं। कालिज की दो वर्ष की पढ़ाई पूरी करने पर एफ. ए. (या इंटरमीजिएट) की परीक्षा होती है। चार वर्ष की पढ़ाई पूरी करने पर बी. ए. की परीक्षा होती है। बी. ए. पास को 'ग्रेजुएट' कहते हैं। इसके दो वर्ष बाद की परीक्षा पास करनेवाले एम. ए. हो जाते हैं। उच्च शिक्षा अभी तक प्रायः अंगरेजी द्वारा दी जाती रही है। हाँ, अब कुछ स्थानों में देशी भाषाओं द्वारा दी जाने लगी है।

उच्च शिक्षा का क्रम निश्चित करने और उसकी परीक्षा लेने का प्रबन्ध विश्वविद्यालय या 'यूनिवर्सिटियाँ' करती हैं। भारतवर्ष में सब मिलाकर अठारह विश्वविद्यालय हैं। इनमें पाँच तो संयुक्तप्रान्त में ही हैं:—इलाहाबाद, बनारस, आगरा, लखनऊ, और अलीगढ़ में। मध्यप्रान्त का विश्वविद्यालय नागपुर में, बिहार का पटना में, और पंजाब का लाहौर में है।

स्त्री-शिक्षा—स्त्री-शिक्षा का प्रचार क्रमशः बढ़ता जा रहा है।

---

*कुछ स्थानों में हाई स्कूल की अंतिम दो तथा कालिजों की प्रथम दो श्रेणियों की शिक्षा के लिए इन्टरमीजिएट कालिज खोले गये हैं इनका शिक्षाक्रम निश्चित करने, और परीक्षा का प्रबन्ध करने का कार्य 'हाईस्कूल और इन्टरमीजिएट शिक्षा-बोर्ड' करता है।

परन्तु पढ़नेवाली कन्याओं में से अधिकांश प्राइमरी शिक्षा ही प्राप्त करती हैं। बाल-विवाह तथा पर्दे की सामाजिक कुरीतियाँ उन की उच्च शिक्षा-प्राप्ति में बाधा डालती हैं; इसमें क्रमशः सुधार हो रहा है। गाँवों में और कहीं-कहीं नगरों में कन्याएँ लड़कों के साथ ही पढती हैं। पाठको! तुमने कुछ शिक्षा पायी है; तुम शिक्षा के लाभ समझते होगे, जो हमने संक्षेप में इस पाठ के आरम्भ में बताये हैं। क्या तुम देश में स्त्री-शिक्षा के बढ़ाने का प्रयत्न न करोगे? तुम्हारे कोई सगी या रिश्ते में बहिन-भतीजी आदि हो, तो उसे पढ़ने के लिए उत्साहित करना तुम्हारा कर्त्तव्य है। इस कर्त्तव्य के पालन करने से तुम स्त्री-शिक्षा के प्रचार में कुछ-न-कुछ सहायक हो सकते हो।

कृषि-शिक्षा—भारतवर्ष कृषि-प्रधान देश है। बहुत से आदमियों की आजीविका का मुख्य साधन यही है। इसलिए इस विषय की शिक्षा के बारे में भी कुछ बातें जान लेनी चाहिए। यहाँ कानपुर, नागपुर, लायलपुर (पंजाब), और पूसा (बिहार) आदि में कृषि-कालिज हैं। उनके साथ साथ कृषि-विज्ञान-शाला (तथा पशुशाला) है। उनमें अनुभव प्राप्त करने के लिए खेती के प्रयोग किये जाते हैं, जिससे नयी-नयी खोज हो, और खेती के रोग दूर करने के उपाय मालूम हों। कृषि-कालिजों में शिक्षा अँगरेजी भाषा द्वारा दी जाती है; यदि देशी भाषाओं द्वारा शिक्षा दी जाय तो उनसे अधिक लाभ हो। भारतवर्ष में कुछ स्कूलों में कृषि-विद्या पाठ्य विषय है; जहाँ-तहाँ कुछ कृषि-विद्यालय भी हैं। इनमें साधारण शिक्षा के अतिरिक्त कृषि के सिद्धान्तों की शिक्षा दी जाती है, तथा इस विषय का व्यावहारिक अनुभव भी कराया जाता है।

उद्योग-धन्धों की शिक्षा—पाठको ! क्या तुमने कभी यह विचार किया है कि तुम बड़े होकर क्या काम धन्धा करोगे । सम्भव है, तुम में कुछ कहीं नौकरी करें । परन्तु देश में नौकरियों की एक सीमा है । सब पढ़े-लिखों को नौकरी नहीं मिल सकती । और आजीविका के लिए कोई दूसरा काम अच्छी तरह और आसानी से तभी किया जा सकता है, जब उसके लिए पहले से कुछ शिक्षा मिली हो । भारतवर्ष में इस शिक्षा का प्रबन्ध बहुत ही कम है । केवल थोड़े से ही नगरो में सरकार की तरफ से ऐसे स्कूल खुले हुए हैं, जिनमें दस्तकारी, धातु का काम, जेवर बनाना, जवाहरात का काम, कपड़े और दरी बुनना, मिस्तरी का काम, मिट्टी के खिलौने बनाना तथा लकड़ी लोहे आदि का, या दर्जी का काम सिखाया जाता है ।

कुछ स्थानों में व्यापारिक शिक्षा भी दी जाती है । कई प्रान्तों के अगरेजी स्कूलों की परीक्षा में चित्रकारी, कृषि, 'बुककीपिंग' (अंगरेजी ढङ्ग का बहीखाता), 'शौर्टहैंड' (शीघ्र-लेख-प्रणाली) और टाइप करना आदि सिखाया जाता है ।

कुछ बड़े-बड़े नगरों में 'मेडीकल' अर्थात् चिकित्सा सम्बन्धी, तथा कानून की, शिक्षा के लिए कालिज खुले हुए हैं, जिनसे डाक्टर और वकील आदि निकलते हैं । अध्यापक का कार्य सीखने के लिए नार्मल स्कूल, तथा ट्रेनिंग स्कूल और ट्रेनिंग कालिज आदि हैं ।

बुनियादी शिक्षा—सन् १९३७ ई० में यहाँ प्रान्तों की विशेषतया कांग्रेस-सरकारों ने बुनियादी या आधारभूत (बेसिक) शिक्षा

की योजना बनायी।* इसकी मुख्य बातें ये हैं—छः सात साल के सब बालकों के लिए उनकी मातृभाषा में सात साल तक मुफ़्त और अनिवार्य शिक्षा का प्रबन्ध हो। शिक्षा का आधार या केन्द्र किसी प्रकार की दस्तकारी हो। शिक्षा के सब विषय (भाषा, गणित, भूगोल, इतिहास, विज्ञान और आलेख्य आदि) उस दस्तकारी के सहारे से सिखाये जायँ। दस्तकारी का चुनाव स्थानीय परिस्थिति को ध्यान रख कर किया जाय। प्रयोग के लिए कताई-बुनाई बुनियादी दस्तकारी मानी जाय। इस योजना के अनुसार पहले खूब उत्साह से काम किया गया था, परन्तु सन् १६३६ में कांग्रेस-सरकारों के त्याग देने के बाद इस ओर उपेक्षा की जाने लगी। अब सन् १६४६ से फिर यह कार्य अच्छी तरह किया जाने लगा है।

शिक्षा विभाग—पाठको! अगर तुम किसी सरकारी स्कूल में पढ़े हो तो तुमने देखा होगा कि समय-समय पर उसका निरीक्षण करने के लिए एक अफसर आता है। उसे साधारण बोलचाल में डिप्टी साहब या इन्सपेक्टर साहब कह देते हैं। असल में उसके पद का नाम 'डिप्टी इन्सपेक्टर' होता है। 'डिप्टी' का अर्थ सहायक या अधीन है; और इन्स्पेक्टर का अर्थ है जाँच करने वाला, या निरीक्षक। डिप्टी इन्स्पेक्टर एक या अधिक सब-डिप्टी-इन्स्पेक्टरों की सहायता से ज़िले के स्कूलों का निरीक्षण करता है। इसे ज़िला-इन्स्पेक्टर भी कहते हैं। एक डिवीज़न में कई ज़िला-इन्स्पेक्टर होते हैं डिवीज़न या सर्कल भर के मुख्य अफसर को 'इन्स्पेक्टर' कहते हैं, उसके कुछ सहायक होते

*यह योजना महात्मा गांधी की प्रेरणा से वर्धा (मध्यप्रान्त) में बनी थी। इसे वर्धा-शिक्षा-योजना भी कहते है।

हैं, उन्हें एसिस्टेंट 'इन्स्पेक्टर' कहते हैं। इन्स्पेक्टरों के ऊपर 'डायरेक्टर' होता है, जो एक प्रान्त के शिक्षा-विभाग की देखरेख करता है।

शिक्षा-विभाग के नियम के अनुसार पढ़ाई कराने वाली और उसके कर्मचारियों द्वारा निरीक्षण करानेवाली सरकारी, तथा म्युनिसिपल और ज़िला-बोर्डों की संस्थाएँ 'पब्लिक' या सार्वजनिक कहलाती हैं। इन्हें छोड़कर आर्यसमाज, ईसाइयों तथा अन्य विशेष सम्प्रदायों की संस्थाओं को 'प्राइवेट' कहते हैं। उनमें प्रायः धार्मिक शिक्षा भी दी जाती है। बहुतसी प्राइवेट संस्थाएँ सरकारी सहायता लेती हैं। उन्हें अपना पाठ्यक्रम निश्चित करने, अपने मकान आदि बनवाने में सरकारी नियमों का पालन करना होता है। सरकारी इन्स्पेक्टर समय-समय पर उनका निरीक्षण करते हैं।

ग़ैर-सरकारी और राष्ट्रीय-शिक्षा संस्थाएँ—कुछ स्थानों में गुरुकुल, ऋषिकुल, और विद्यापीठ आदि प्राचीन ढङ्ग की संस्थाएँ हैं, ये ग़ैर-सरकारी हैं, और इनमें प्रायः राष्ट्रीय शिक्षा दी जाती है। इनके अलावा आधुनिक ढङ्ग की राष्ट्रीय संस्थाएँ भी कहीं-कहीं काम कर रही हैं। हिन्दी भाषा में विविध परीक्षाएँ लेनेवाली संस्थाओं में हिन्दी साहित्य सम्मेलन (प्रयाग) अच्छा काम कर रहा है; इसकी परीक्षाओं के लिए देश भर में विविध केन्द्र स्थापित हैं। सेवाकार्य की शिक्षा देने से लिए कुछ स्थानों में बालचर संघ सेवासमितियाँ आदि स्थापित हैं; इनके विषय में आगे लिखा जायगा।

ग्यारहवाँ पाठ

कृषि और सिंचाई

पाठको ! यह तो तुम जानते ही हो कि भारतवर्ष में अधिकतर आदमी गाँवों में रहते हैं, और उनमें से बहुतों के लिए खेती का ही धंधा मुख्य है। वे या तो खेती करते हैं, या खेती करने वालों के काम में किसी-न-किसी प्रकार की सहायता करते हैं। लगभग तीन चौथायी जनता की आजीविका खेती से ही चलती है। सरकार को भी खेती से बहुत लाभ है। सेना, पुलिस, अदालतें, जेल और स्कूल आदि के लिए बहुत ख़र्च की ज़रूरत होती है; उन विभागों से आमदनी बहुत कम होती है। परन्तु खेती से तो ख़र्च काटकर भी, सरकार को बड़ी बचत होती है। और, इस बचत से सरकार के अन्य विभागों का काम चलता है। असल में प्रत्येक प्रान्त की सरकार के लिए आमदनी की सबसे बड़ी मद्द खेती की मालगुज़ारी है। इसलिए प्रजा तथा सरकार दोनों की दृष्टि से खेती की उन्नति बहुत आवश्यक तथा लाभकारी है।

भारतवर्ष में कृषि की अवनति के कारण—भारतवर्ष में अधिकतर खेती की दशा अच्छी नहीं है। जन संख्या तथा क्षेत्रफल को देखते हुए, यहाँ की पैदावार बहुत कम है। अन्य देशों की तुलना में, फ़ी आदमी, अथवा फ़ी एकड़ भूमि, यहाँ खेती की उपज में बड़ी कमी है।

इसके मुख्य कारण, किसानों की गरीबी तथा अज्ञान हैं। उनके पास प्रायः इतनी पूँजी नहीं होती कि वे नये यंत्र, बढ़िया खाद, उत्तम बीज आदि खरीदकर काम में ला सकें, अथवा खेतों में पानी देने के लिए कूएँ आदि जितने चाहिए, खुदवा सकें। भारतवर्ष में खेती पशुओं की सहायता से होती है, अन्य देशों की तरह यहाँ मशीन तथा वैज्ञानिक आविष्कारों का उपयोग नहीं किया जाता। इसलिए यहाँ पशुओं की रक्षा, उन्नति, और चिकित्सा आदि की विशेष आवश्यकता है। इन बातों का यथेष्ट प्रबन्ध न होने से भी यहाँ खेती गिरी हुई हालत में है। इसके अलावा इस देश के अनेक स्थानों में एक आदमी की थोड़ी सी ज़मीन एक जगह है, और थोड़ी सी बहुत दूर पर है। इससे उनमें खेती करना, तथा उनकी देखरेख करना, बहुत कठिन हो जाता है, और ख़र्च भी अधिक पड़ता है। किसानों तथा ज़मींदारों को चाहिए कि सरकार की सहायता से खेती की इन असुविधाओं को दूर करने का यत्न करें। सहकारी समितियों से भी बहुत लाभ उठाया जा सकता है, इनके सम्बन्ध में आगे सोलहवें पाठ में लिखा है।

कृषि-विभाग—कृषि की उन्नति के लिए भारतवर्ष में एक सरकारी कृषि-संस्था है। अलग-अलग प्रान्तों में मन्त्री के अधीन खेती का डायरेक्टर तथा उसके नीचे डिप्टी डायरेक्टर, एसिस्टेंट डायरेक्टर, इन्स्पेक्टर और इंजिनियर आदि रहते हैं। कृषि-विभाग के अफ़सरों के प्रयत्नों से कृषि के सम्बन्ध में—विशेषतया भिन्न-भिन्न प्रकार की ज़मीनों में उचित खादों के उपयोग, अच्छे बीज, पौदों के रोग और उनके निवारण, नयी तरह के औज़ारों के उपयोग, और

नए तरीक़ों से खेती करने के सम्बन्ध में—कई उपयोगी बातों का ज्ञान मिल चुका है। परन्तु सर्वसाधारण में अभी तक इस ज्ञान का यथेष्ट प्रचार नहीं हुआ; कारण, उन्हें अंगरेज़ी तो क्या, देशी भाषा भी पढ़नी नहीं आती। उनमें शिक्षा का प्रचार बहुत कम है, और जबतक सरकारी कर्मचारी उन्हें इस विषय को भली भाँति समझाने तथा उनकी शंकाओं को दूर करने का विशेष रूप से उद्योग न करें, केवल सरकारी फर्मों या नुमायशों से किसानों को काफी लाभ नहीं होता।

किसानों को आर्थिक सहायता—कृषि सम्बन्धी बहुत से सुधार ऐसे हैं, जिनकी उपयोगिता किसानों की समझ में अच्छी तरह आ जाने पर भी, वे उनसे समुचित लाभ इसलिए नहीं उठा सकते कि वे प्रायः बहुत गरीब और क़र्ज़दार हैं। किसानों को साहूकारों से बहुत अधिक सूद पर रुपया उधार मिलता है। सरकार उन्हें भूमि की उन्नति करने, और पशु, बीज तथा कृषि सम्बन्धी अन्य वस्तुओं को ख़रीदने के लिए कम सूद पर रुपया उधार देती है। इसे 'तकावी' कहते हैं। बहुत से किसानों को अपनी अनेक आवश्यकताओं के लिए बहुधा काफ़ी 'तकावी' नहीं मिल सकती। सरकारी साख-समितियों से उन्हें बहुत लाभ पहुँच सकता है। इनके विषय में आगे लिखा जायगा। वर्तमान अवस्था में प्रायः किसानों को सरकारी लगान देने के लिए ही, अपनी उपज का बड़ा भाग बेच देना होता है। बेचने में जल्दी करने के कारण, उसके दाम अच्छे नहीं उठते। इसका सुधार तथा किसानों की आर्थिक उन्नति करने के लिए इस बात की भी बड़ी आवश्यकता है कि लगान की दर में काफ़ी कमी की जाय।

सिचाई की आवश्यकता—ऊपर बताया गया है कि यहाँ

प्रायः किसानों की आर्थिक दशा अच्छी नहीं। इस पर जब बारिश बहुत कम, या बहुत ज्यादह होती है, तो फ़सल खराब होजाने से उनका कष्ट और भी बढ़ जाता है। आम तौर से उत्तरी पंजाब, संयुक्तप्रान्त, और मदरास प्रान्त के तट की भूमि में वर्षा कुछ निश्चित नहीं है; और दक्षिण मालवा, गुजरात, सिंध और राजपूताने में वर्षा बहुत कम होती है। इन भागों में खेती करने के लिए सिंचाई (आबपाशी) की विशेष आवश्यकता है।

भारतवर्ष में सिंचाई के तीन साधन हैं; कुएँ, तालाब और नहरें। कुएँ यहाँ प्राचीन काल से रहे हैं, और अधिकतर, जनता के ही बनवाये हुए हैं; कभी-कभी सरकार भी इनके खुदवाने में सहायता देती है। तालाब भी यहाँ पुराने समय से हैं। इनके बनाने का तरीका यह है कि बहते हुए पानी को सुभीते की जगह रोककर उसके चारों तरफ मेंड (किनारा) बना दी जाती है। मदरास में तालाब बहुत हैं; कुछ सरकार के बनवाये हुए हैं, और, कुछ लोगों के। कुछ तालाबों का घेरा कई-कई मील का है। बंगाल, और बिहार में भी तलाबों से आबपाशी का बहुत काम लिया जाता है।

नहरें भी यहाँ पहले से है। हाँ, अंगरेजी अमलदारी में इनकी अच्छी उन्नति हुई, तथा हो रही है। वर्तमान नहरें प्रायः सरकार की बनायी हुई, और उसी के प्रबन्ध में हैं। यह सिचाई का सबसे बड़ा साधन है। नहरें निकल जाने पर बंजर भूमि भी बहुत सुहावनी, हरी-भरी, तथा खूब आबाद हो जाती है; उदाहरण के लिए पंजाब में नहरें निकलने से कई जगह अच्छी सुन्दर नहरी बस्तियाँ ('कालोनी') हो गई हैं। वहाँ पैदावार तथा आबादी पहले से कई

गुनी हो गयी है।

भारतवर्ष में कुल मिलाकर लगभग पच्चीस करोड़ एकड़ भूमि जोती जाती है। इसमें से इस समय केवल पाँचवें हिस्से में सिंचाई होती है, शेष भूमि का आसरा सिर्फ़ वर्षा है। नहरें धीरे धीरे बढ़ रही हैं, परन्तु अभी उनकी आवश्यकता बहुत अधिक है।

सिंचाई का महसूल— सिंचाई का महसूल भिन्न-भिन्न प्रान्तों में अलग-अलग हिसाब से वसूल किया जाता है। एक प्रान्त में भी सब फ़सलों के लिए यह महसूल बराबर नहीं होता, किसी के लिए कम होता है, और किसी के लिए ज्यादह। कहीं कहीं तो यह महसूल लगान के साथ ही, और कहीं-कहीं अलग लिया जाता है।

सिंचाई विभाग—सिंचाई का प्रबन्ध करने के लिए प्रत्येक प्रान्त में एक सरकारी विभाग है उसे सिंचाई विभाग (इरीगेशन डिपार्टमेंट) कहते हैं। इस विभाग का प्रधान प्रान्तीय अधिकारी 'चीफ़ इंजिनियर' कहलाता है। उसके अधीन एक-एक 'सर्कल' के सुपरिन्टेंडिंग इंजिनियर और उससे नीचे एक-एक डिवीज़न के 'एग्जीक्यूटिव इंजीनियर' होते हैं। एग्जीक्यूटिव इंजीनियर के नीचे क्रमशः एसिस्टेन्ट इंजिनियर' और औवरसियर आदि कर्मचारी काम करते हैं।

बारहवाँ पाठ

सरकारी निर्माण-कार्य

पाठको ! तुमने आगरे का ताजमहल, देहली की कुतुबमीनार, या इलाहाबाद का किला देखा होगा। और नहीं तो ऐसी इमारतों का नाम तो सुना ही होगा। ये इमारतें किसकी हैं ? ये बादशाहों या राजाओं ने बनवायी हैं। ऐसी इमारतों के बनवाने में दो बातों का ध्यान रखा जाता है, या तो यह कि वे बहुत सुन्दर हों अथवा वे बहुत उपयोगी हों। प्रचीन काल में सौंदर्य का विशेष ध्यान रखा जाता था, आजकल उपयोगिता का अधिक विचार किया जाता है।

पिछले पाठों में यह बताया जा चुका है कि भारतवर्ष में सरकार के बहुत से विभाग तथा कार्य हैं—शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, आबपाशी, पुलिस, अदालतें और जेल आदि। इनके लिए इमारतें बनवाने की जरूरत होती है। इस कार्य के वास्ते प्रत्येक प्रान्त में सरकार का एक अलग ही विभाग है। जिसका नाम है, सरकारी-निर्माण-विभाग। इसे अंगरेजी में 'पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेंट' कहते हैं; इसका संक्षिप्त है पी. डब्ल्यू. डी.। साधारण बोलचाल में बहुधा अंगरेज़ी का यह संक्षिप्त नाम ही काम आता है।

निर्माण-विभाग के काम—सरकारी नर्माण-विभाग इस प्रकार के काम करता है :—

(१) सड़कें बनाना तथा उनकी मरम्मत करना।

(२) सरकारी कामों के वास्ते आवश्यक मकान, स्कूल, अस्पताल, जेल, दफ़्तर, अजायबघर, अदालतें, इत्यादि बनाना, और उनकी मरम्मत करना ।

(३) सार्वजनिक सुविधा के लिए बन्दरगाह, घाट पुल आदि बनाना ।

(४) आबपाशी के लिए नहरें खोदना ।

सड़कें—इन कार्यों में सड़कों का भी ज़िक्र हुआ है । नागरिकों के लिए ये कितनी उपयोगी होती हैं, यह बहुधा सहज ही अनुमान नहीं किया जाता । भिन्न-भिन्न स्थानों के नागरिकों को आपस में मिलने-जुलने के प्रसंग जितने अधिक आते हैं, उतना ही आपसी व्यवहार तथा व्यापार आदि बढ़ता है, उन्हें एक-दूसरे से अनेक उपयोगी बातों का ज्ञान प्राप्त होता है । इस प्रकार नागरिकों की आमदरफ़्त के साधनों की वृद्धि बहुत आवश्यक है । जिन दो स्थानों के बीच में अच्छी सड़क नहीं होती, वहाँ के लोगों को एक दूसरे से मिलने में बहुत असुविधा होती है । भारतवर्ष में सड़कों की दशा अच्छी नहीं है । कुछ थोड़ी सी सड़कें पक्की और कुछ ऊँची हैं तथा बारहों महीने खुली रहती हैं । अधिकांश सड़कें कच्ची हैं; उन पर मोटर तो क्या, इक्के-ताँगे भी अच्छी तरह नहीं जा सकते; बरसात के दिनों में तो वे प्रायः बन्द ही हो जाती हैं । बहुत सी सड़कों के बनवाने तथा मरम्मत आदि का काम ज़िला-बोर्ड तथा म्युनिसपैलटियों के हाथ में है, ये ज़िले के सदर-मुक़ाम तथा कुछ खास-खास स्थानों की ही सड़कों का ध्यान रखती हैं—अन्य अधिकांश स्थानों खासकर गाँवों की सड़कों की ओर विशेष ध्यान नहीं देतीं । अब सरकार सड़कों की ओर

अधिक ध्यान देने लगी है। कई सड़कें प्रान्तीय कर दी गई हैं, उनकी मरम्मत आदि का जो काम स्थानीय संस्थाओं द्वारा धनाभाव के कारण अच्छी तरह नहीं होता था अब प्रान्तीय सरकार कर रही है। गाँवों में भी सड़कों की उन्नति हो रही है; हाँ अभी इस दिशा में बहुत काम करना शेष है।

विभाग का संगठन—प्रत्येक प्रान्त में सरकारी निर्माण-विभाग का प्रधान कर्मचारी 'चीफ इञ्जिनियर' कहलाता है। निर्माण-कार्यों के लिए प्रत्येक प्रान्त कुछ 'सर्कलों' में तथा हर एक 'सर्कल' पाँच-छः 'डिवीज़नों' में, बँटा हुआ होता है। 'सर्कल' भर के कार्यों के निरीक्षण करने का अधिकार 'सुपरिंटेंडिंग इंजिनियर' को होता है और डिवीज़न एक 'एग्ज़िक्यूटिव इंजिनियर' के सुपुर्द रहता है। इसके नीचे सहायक इंजिनियर, ओवरसियर और सब-ओवरसियर आदि रहते हैं। इस विभाग में काम करनेवाले बड़े-बड़े अधिकारी प्रायः इङ्गलैंड में शिक्षा पाकर आते हैं। भारतवर्ष में रुड़की, शिवपुर (बङ्गाल), मदरास, पूना, बम्बई और जबलपुर आदि में इस विषय की शिक्षा के लिए स्कूल खुले हैं।

तेरहवाँ पाठ

उद्योग धन्धे

पाठको! तुम इस पुस्तक में कृषि का पाठ पढ़ चुके हो। इसमें सन्देह नहीं कि हमें अन्न, गन्ना आदि भूमि से उत्पन्न पदार्थों की बहुत

आवश्यकता है। परन्तु केवल उन चीज़ों से ही हमारा सब काम नहीं चल जाता। हमें ऐसी बहुतसी चीज़ों की ज़रूरत होती है, जिनकी खेती नहीं की जाती; जो भूमि से उत्पन्न पदार्थों से भिन्न-भिन्न प्रकार से बनायी जाती हैं। उदाहरण के लिए हमें पहनने को कपड़े चाहिए। भूमि से कपास पैदा की जा सकती है, परन्तु उससे सूत के कपड़े बनाने का काम और भी करना बाक़ी रहेगा; तब ही हमारी आवश्यकता पूरी हो सकती है। इस प्रकार जंगल में वृक्ष पैदा होते है, परन्तु उनसे लड़की के तख्ते तैयार करने या गोंद, लाख आदि इकट्ठा करने का काम और भी करना होता है। तुम शायद यह भी सुनते होगे कि सोना चांदी या लोहा आदि ज़मीन से निकलता है, जिस रूप में वह मिलता है, वह बहुत उपयोगी नहीं होता। उसे बड़ी होशियारी और मेहनत से साफ किया जाता है तब उसकी आवश्यक चीज़ें बन सकती हैं।

कच्चा और तैयार माल—इससे स्पष्ट है कि भूमि से जो चीज़ें मिलती हैं, उनमें से बहुतों को व्यवहार में लाने के लिए हमें तरह-तरह के काम करने पड़ते हैं। ये कार्य उद्योग-धन्धे के काम कहे जाते हैं। उद्योग-धन्धों द्वारा 'कच्चे माल' को 'तैयार माल' बनाया जाता है। मिसाल के तौर पर रुई, ऊन, तेलहन, लकड़ी, लोहा आदि कच्चा माल है। उद्योग-धन्धों से इनके कपड़े, तेल, कुर्सी, मेज़, औज़ार आदि बनते हैं, जिन्हें तैयार माल कहते हैं।

दस्तकारी—प्राचीन काल में, भारतवर्ष में दस्तकारियों का बहुत प्रचार था। खेती की उपज के अलावा लोगों को जिन-जिन चीजों की ज़रूरत होती थी, उन्हें भी वे यहाँ ही बना लेते थे। उस समय यहाँ

से बहुत सा बढ़िया-बढ़िया तैयार माल विदेशों में बिकने जाता था। दस्तकारियों के कारण भारतवर्ष का दर्जा अन्य देशों से कहीं ऊँचा था। पर अब वह बात नहीं रही। जब से कल-कारखानों की लहर चली है, भारतवर्ष बहुत पीछे रह गया; अब तो यहाँ बहुत सा माल विदेशों से आता है। यह ठीक है कि हाथ से बनाया हुआ माल, मशीनों से तैयार किये हुए माल का मुकाबिला नही कर सकता; बहुत महँगा रहता है; तथापि यदि यहाँ के आदमी दस्तकारियों की ओर काफ़ी ध्यान दें, तो उनकी बहुत सी जरूरतें यहाँ ही पूरी हो सकती हैं, और देश का बहुत सा धन विदेशों को जाने से रुक सकता है।

तुम जानते हो कि यहाँ किसान बहुत गरीब हैं, उनके लिए खेती की पैदावार प्रायः काफ़ी नहीं होती है। इसके सिवाय खेती का काम साल भर नहीं रहता। किसानों का जो समय खेती से बचता है, वह प्रायः बेकार जाता है। यदि वे अपने अवकाश के समय को दस्तकारी में लगावें तो उनके उस समय का सदुपयोग भी हो सकता है, और उन्हें कुछ आमदनी भी हो सकती है। भारतवर्ष में दस्तकारियों के लिए बड़ी सुविधा है। यहाँ हर तरह का कच्चा माल बहुतायत से पैदा होता है। परन्तु हम उससे तैयार माल नहीं बनाते। बहुतसा कच्चा माल विदेशों को भेज दिया जाता है। वहाँ वाले उसका तैयार माल बनाते हैं, फिर हम अपनी जरूरत के लिए उसे, उनसे भारी मूल्य पर खरीदते हैं। यदि भारतवासी दस्तकारियों और उद्योग-धन्धों की ओर यथेष्ट ध्यान दें तो इस देश को बड़ा लाभ पहुँचे।

भिन्न-भिन्न स्थानों के लिए अलग-अलग दस्तकारियाँ उपयोगी हो

सकती हैं। सूत कातना और कपड़ा बुनाना एक ऐसा काम है, जिसकी हर जगह ज़रूरत होती है। यह काम बहुत आसानी से किया जा सकता है। इसको शुरू करने में, और आवश्यकता होने पर इसे छोड़ देने मे, कुछ कठिनाई नहीं होती। इसलिए किसानों के वास्ते यह दस्तकारी विशेष रूप से उपयोगी है। सहकारी समितियों का विस्तार होने से देश की दस्तकारियों की बहुत उन्नति हो सकती है। इन समितियों के विषय में आगे लिखा जायगा।

कल-कारखाने—निदान, भारतवर्ष के आदमी दस्तकारियों की तरफ अधिक ध्यान दें तो बहुत लाभ हो। परन्तु इसका यह मतलब नहीं, कि देश में कल-कारखाने बिल्कुल हो ही नहीं। अब तो कल कारखानों का ही जमाना है, बड़ी-बड़ी मशीनों द्वारा, खूब बड़े पैमाने पर, भाफ या बिजली आदि की सहायता से, बहुत सी, तरह-तरह की चीज़ें तैयार की जाती हैं। इस ज़माने में मशीनों से बचना बहुत मुश्किल है। ज़रूरत की चीज़ों में बहुत सी ऐसी हैं, जो मशीनों के बिना तैयार ही नहीं हो सकतीं। इसके अलावा जो चीज़ें तैयार भी हो सकती हैं, वे कल-कारखानों में बनी चीज़ों से कम सुन्दर, और अधिक महँगी पड़ती हैं। निदान, अब हरएक देश में, कुछ बड़े-बड़े कारखानों की ज़रूरत होती है। हाँ, कारखानों में वही माल बनाना चाहिए, जिसकी देशवासियों को बहुत ही ज़रूरत हो और जो हाथ से तैयार न हो सके; भोजन, वस्त्र जैसी रोज़मर्रा की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कारखानों की ज़रूरत नहीं। इसके अलावा कारखानों में फैशन या भोगविलासादि की सामग्री बनवाना भी अनुचित है। अस्तु; भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न नगरों में लगभग साढ़े

बारह हजार कारखाने हैं। इनमें प्रतिदिन औसतन साढ़े बीस लाख मजदूर काम करते हैं।

इनसे होने वाली बुराइयाँ—कल-कारखानों के मुख्य-मुख्य लाभ ऊपर बताये गये हैं; पर इनसे हानियाँ भी बहुत हैं। कुछ हानियों को तो तुम पीछे समझ सकोगे। हाँ, यह तुम अब भी जानते हो कि इनके कारण अब बस्तियाँ बड़ी घनी हो गयी हैं। धुआ बहुत रहता है। मकानों का किराया बढ़ता ही जाता है। साधारण आमदनी वाले मजदूरों को बहुत तङ्ग जगह में निर्वाह करना पड़ता है, उसकी आबहवा भी अच्छी नहीं होती। इससे उनका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। वे रोगी और दुर्बल हो जाते हैं। सत्सङ्ग न मिलने से वे मद्यपान आदि की बुरी आदतों के शिकार होते हैं। बहुत से मजदूरों को बहुत समय तक अपने घर-गृहस्थी से दूर रहना पड़ता है। उनके बाल-बच्चों की सार-सँभार नही होती। उनका पारिवारिक सुख बहुत-कुछ नष्ट हो जाता है।

मजदूरों और पूँजीपतियों का विरोध—इसके अलावा एक बात और है। कल-कारखानों में यद्यपि श्रम और पूँजी दोनों सहायक होते हैं, परन्तु श्रम करने वालों और पूँजी लगानेवालों का प्रायः आपस में विरोध रहता है। मजदूर सोचते हैं कि हमें अपने काम के बदले जितनी अधिक मजदूरी और सुविधाएँ मिलें, उतना ही अच्छा है। दूसरी ओर कारखाने वाले यह विचारते हैं, कि उन्हें मजदूरों वेतन आदि में खर्च जितना कम करना पड़े, उतना ही उत्तम है। प्रत्येक अपने स्वार्थ को देखता है, तो आपस में विरोध होनेवाला ही ठहरा। दोनों पक्ष सफलता के लिए अपनी

शक्ति बढ़ाने का उद्योग करते हैं, और, इसी लिए अपना संगठन करने की फिकर में रहते हैं।

हड़ताल—आम तौर से आदमी सोचते हैं कि जब कोई मजदूर यह समझे कि उसे अधिक घंटे काम करना पड़ता है, वेतन कम मिलता है, या उसकी अन्य शिकायतों पर मालिक ध्यान नहीं देता, तो वह अपना काम छोड़ सकता है। परन्तु, जहाँ कारखाने में सैकड़ों और हज़ारों मजदूर काम करते हैं, वहाँ दो चार, या दस बीस के काम छोड़कर चलेजाने से, कारखाने की कोई हानि नहीं होगी; मालिक पर उसका कुछ प्रभाव नहीं पड़ेगा। इस बात का अनुभव करके, अब मजदूरों ने इकट्ठे मिलकर, मालिक को पहले से सूचना अर्थात् 'नोटिस' देकर, एकसाथ काम छोड़ने का ढङ्ग इख्तयार किया है। इसे हड़ताल करना कहते हैं। हड़ताल के समय, अपनी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए, वे पहले से थोड़ी-थोड़ी रक़म जमा करके, एक कोष जमा कर लेते हैं; हड़ताल करने पर इस कोष से वे अपना काम निकालते हैं। जिनके पास ऐसा कोष नहीं होता, उनकी हड़ताल सफल नहीं हो सकती।

जब मजदूरों की शिकायतें उचित हों, और, मालिक उन पर ध्यान न दे तो उनका हड़ताल करना ठीक ही है। परन्तु कभी-कभी उचित हड़ताल भी सफल नहीं होती। इसका कारण यह होता है कि मजदूरों में फूट हो जाती है; कुछ मजदूर, मालिकों से शिकायते दूर कराने से पहले ही, काम पर जाने को तैयार हो जाते हैं; अथवा, उस नगर के या बाहर के अन्य मजदूर वहाँ आ जाते हैं; इस विचार से, जो लोग हड़ताल करते हैं, वे कोशिश करते हैं कि उनकी जगह काम करने

के लिए दूसरे मजदूर न आ सकें। जो आना चाहते है, उन्हें वे रोकते हैं, और, उन पर वे कई प्रकार का दबाव डालते हैं। इससे कई बार उपद्रव होने की आशङ्का होती है। मजदूरों को चाहिए कि उपद्रव न होने दें, शान्तिमय उपायों से ही कामयाब होने की कोशिश करें।

द्वारावरोध—जिस प्रकार मजदूर संगठित होकर हड़ताल द्वारा कारखाने के मालिकों से अपनी वेतनादि की शर्तें पूरी कराना चाहते हैं, उसी प्रकार जब कारखानेवाले समझते हैं कि हम मजदूरों से कम वेतन पर काम करा सकते हैं, तो वे आपस में सलाह करके मजदूरों को नोटिस दे देते हैं कि अमुक दिन से, तुम्हारी गरज हो तो, इतनी मजदूरी पर, इतने घंटे काम करना, अन्यथा यहाँ मत आना। यदि मजदूर ये शर्तें नहीं मानते तो मालिक अपने कारखाने का फाटक बन्द करके उनका आना रोक देता है। इसे द्वारावरोध (दरवाजा बन्द करना) या तालाबन्दी ('लाक आउट') कहते हैं। मजदूर प्रायः गरीब होते ही हैं; इसके अतिरिक्त, यदि उनमें संगठन भी न हो तो पूँजीपतियों के सामने उनकी हार निश्चित ही समझनी चाहिए।

विरोध कैसे हटे—हड़ताल और द्वारावरोध दोनों आजकल कारख़ानों के युग में साधारण बात हो गयी हैं;मज़दूर और पूँजीपतियों को बराबर यह चिन्ता लगी रहती है, कि कहीं दूसरा पक्ष हमसे अधिक बलवान न हो जाय। प्रत्येक अपना-अपना स्वार्थ सिद्ध करना और दूसरे को हराना चाहता है। कोई दूसरे की भलाई नहीं देखता। उधर, हड़ताल हो या द्वारावरोध, उससे धनोत्पत्ति का काम तो रुक ही जाता है; इससे देश की बड़ी हानि होती है।

यदि कारखाने में जितना लाभ हो, उसका काफ़ी अंश मज़दूरों में

बाँट दिया जाय तो मज़दूरों को संतोष हो जाय, और वे पूँजीवालों से विरोध न किया करें। इसी प्रकार यदि कारखाने में मजदूरों की भी पूँजी लग जाय तो वे कारखाने के काम को तथा उससे होनेवाले लाभ को, दूसरे का ही न समझ कर, अपना भी समझने लगें तो विरोध का अवसर न आवे। पूँजीपतियों और मज़दूरों का विरोध दूर करने का एक उपाय यह भी है कि सब मजदूर अपनी ही थोड़ी-थोड़ी पूँजी लगा कर, अपने श्रम से, कारखाने को चलावें। इस दशा में कारखाना मजदूरों का ही होगा; दूसरा पक्ष होगा ही नहीं, फिर विरोध होगा किससे? इन उपायों से पूँजीपतियों और मज़दूरों का विरोध दूर हो सकता है। सुविधानुसार इन्हें काम में लाना चाहिए।

कारखानों का क़ानून—सरकार कल-कारखानों की बुराइयाँ रोकने के लिए क्या करती है? भारतवर्ष के कारखानों के कानून की कुछ मुख्य-मुख्य बातें ये हैं:—

जिन कारखानों में मशीन से काम होता हो, और बीस या अधिक आदमी काम करते हों, उसमें यह कानून लागू होता है। किसी मजदूर से बारहमासी कारखानों में एक सप्ताह में ४८ घंटे और एक दिन में ९ घंटे से अधिक काम नहीं लिया जा सकता। सप्ताह में एक दिन छुट्टी रहनी चाहिए। बारह वर्ष से कम उम्र के बालकों को काम पर नहीं लगाया जा सकता। पन्द्रह वर्ष से कम उम्रवालों से छः घंटे से अधिक श्रम नहीं कराया जा सकता। स्त्रियों तथा लड़कों से रात्रि में काम कराने का निषेध है। मशीन के चारों ओर घेरा या बाड़ रहनी चाहिए। कारखानों में पानी, रोशनी हवा, सफ़ाई आदि का सुप्रबन्ध होना चाहिए।

कानून में ऊपर बतायी हुई व्यवस्था होने पर भी अधिकांश श्रमियों का स्वास्थ्य खराब रहता है, उनकी आर्थिक अवस्था अच्छी नहीं होती, वे कर्ज़दार रहते हैं। उनके रहने के स्थान साफ, काफी और हवादार नहीं होते। बहुत से आदमी मद्यपान आदि दुर्व्यसनों में फँसे रहते हैं, उनकी तथा उनके बालकों की शिक्षा और चिकित्सा आदि की कोई व्यवस्था नहीं होती। उनके बुढ़ापे, बीमारी या बेकारी में उनके खाने-पीने का प्रबन्ध नहीं होता। कुछ कारखानेवाले इन बातों की ओर क्रमशः ध्यान दे रहे हैं, अभी और बहुत से प्रयत्नों की आवश्यकता है।

ग्राम-उद्योग संघ—दस्तकारी में बहुत सी समस्याएँ पैदा नहीं होतीं, जो कल-कारखानों में अवश्य होती हैं। उनका काम करनेवाले अपने परिवार के अन्य आदियों के साथ रहते हैं, वे मद्यपान और विलासिता से मुक्त रहते हैं। पूँजीपति और मज़दूरों का संघर्ष भी नहीं होता। भारतवर्ष में दस्तकारी का संघठन बहुत कम है। हाँ, सन् १९२५ ई० से अखिल भारतवर्षीय चर्खा-संघ हाथ की कताई और बुनाई का कार्य उत्तरोत्तर बढ़ रहा है। सन् १९३४ ई० से अखिल भारतवर्षीय ग्राम-उद्योग संघ भी विविध उद्योगों की उन्नति में लगा हुआ है। इसका प्रधान कार्यालय वर्धा (मध्यप्रान्त) में है।

चौदहवाँ पाठ

व्यापार

पाठको! रेलों का पाठ तुम पढ़ चुके हो; उनसे व्यापार में कैसी सहायता मिलती है, यह तुम जानते हो। प्राचीन काल में रेल नहीं

थी; डाक तार की तरह के, समाचार भेजने के साधन भी नहीं थे। इसलिए, उस समय भिन्न-भिन्न देशों के निवासियों का आपस में इतना सम्बन्ध नहीं था। पहले प्रायः प्रत्येक गाँव (या नगर) के आदमी आवश्यक पदार्थों को वहीं मोल ले लेते थे। यदि कभी किसी ऐसी चीज की जरूरत होती थी, जो उनके निवास-स्थान में न मिले तो वे उसे बाजार या हाट के दिन, पास के दूसरे गाँव या नगर से, ले आते थे। जो चीजें वहाँ भी न मिलतीं, वे तीर्थ-यात्रा आदि के समय, भारतवर्ष के ही, दूसरे स्थानों से लायी जाती थीं। यद्यपि प्राचीन काल में भी भारतवर्ष का तैयार माल मिस्र और रोम आदि पश्चिमी देशों के बाजारों में जाता था, अब यहाँ के देशी और विदेशी व्यापार में बहुत वृद्धि हो गयी है। परन्तु यहाँ अब अन्य देशों से बहुत सा तैयार सामान आता है और अधिकाश में कच्चा माल बाहर जाता है। अस्तु, नयी-नयी वैज्ञानिक खोज और आविष्कारों से व्यापार में बहुत सुविधा हो गयी है।

व्यापार के साधन—व्यापार के तीन मार्ग हैं—स्थल मार्ग, जल-मार्ग और वायु-मार्ग। स्थल-मार्ग में कच्ची पक्की सड़कों पर, ठेलों, गाड़ियों, पशुओं, मोटरों आदि से माल जाता है। आधुनिक व्यापार-वृद्धि में रेलों से बड़ी सहायता मिल रही है। जल-मार्ग में नदियों, नहरों और समुद्रों में नाव, स्टीमर और जहाज चलते हैं। युद्ध-काल में, पनडुब्बियों द्वारा, पानी के नीचे-नीचे भी माल ढोया जाता है। वायु-मार्ग से व्यापार थोड़े ही समय से किया जाने लगा है। हवाई जहाजों द्वारा अभी कहीं-कहीं थोड़ा-थोड़ा माल पहुँचाया जाता है, आगे इसमें बहुत उन्नति की सम्भावना है। डाक, तार,

टेलीफोन, और बेतार-के-तार द्वारा एक जगह से दूसरी जगह व्यापार सम्बन्धी समाचार भेजने का काम बड़ी आसानी से और जल्दी ही हो जाता है, और इससे व्यापार खूब बढ़ता है। डाक से तो छोटे-छोटे पार्सल या पैकेट आदि भी भेजे जाते हैं। व्यापार में जो लेन-देन होता है, उसमें बैङ्कों से बड़ी सहायता मिलती है, इनके विषय में आगे लिखा जायगा।

व्यापार की वृद्धि के लिए इन सब साधनों की उन्नति होना आवश्यक है। यह काम अधिकतर सरकार के ही करने का होता है। भारतवर्ष में सरकार द्वारा जो काम हो रहा है, उसका वर्णन पिछले पाठों में हो चुका है। बड़े होने पर तुम्हें अन्य विषयों के सम्बन्ध में भी ज्ञान हो जायगा। बीमे के बारे में कुछ बातें यहाँ बतायी जाती है।

बीमा—डाकखाने के पाठ में तुम पढ़ चुके हो कि चिट्ठियां, पार्सल और हुंडियां आदि भेजते समय उनकी रक्षा या हिफ़ाजत के लिए फीस देकर उनका बीमा कराया जा सकता है। फिर उनके खोये जाने का भय नहीं रहता। व्यापार में भी बहुधा बहुत संदेह और जोखम रहती है। कहीं कोई जहाज डूब न जाय, या उसमें आग न लग जाय, इस विचार से उनका बीमा कराने की व्यवस्था होती है। अगर बीमा किया हुआ कोई जहाज डूब जाय, या किसी मकान या कारखाने आदि में आग लग जाय, तो उसका बीमा करनेवाली कम्पनियाँ उसके मालिक को उतनी रकम दे देती हैं, जितने का बीमा कराया गया हो। आग के अतिरिक्त और भी कई तरह का बीमा होता है। जिन्दगी का बीमा कराने के विषय में, तुम्हें अगले पाठ में बताया जायगा। आजकल बीमा करना एक रोजगार है, और बीमा-

कम्पनियाँ इस काम को अपने फायदे के लिए करती हैं।

तोल और माप—व्यापार करने के लिए मुद्रा (रुपये-पैसे) तथा तोल और माप का होना आवश्यक है। यदि किसी देश में ये भिन्न-भिन्न प्रकार के हों तो वहां के आदमियों को आपस में व्यापार करने में बड़ी असुविधा होती है, और धोखा भी हो सकता है। मुद्रा का वर्णन तो अगले पाठ में किया जायगा, तोल और माप का विचार यहाँ किया जाता है।

भारतवर्ष में सार्वजनिक व्यवहार में तोल के लिए सेर काम में लाया जाता है। यद्यपि कहीं कहीं सेर कुछ कम या ज्यादह वजन का भी होता है, यहाँ अधिकतर अस्सी तोले के सेर का ही चलन है। आम तौर पर सब चीजों का वजन सेर में किया जाता है। भारी वस्तुएँ मन या पसेरी आदि में तोली जाती हैं, जिनका सेरों से हिसाब लग सकता है। इसी प्रकार साधारणतः माप के लिए गज काम में लाया जाता है। एक गज़, दो हाथ या छत्तीस इंच का होता है। भारतवर्ष बहुत बड़ा देश है; इसलिए अलग-अलग प्रान्तों में तोल और माप मे कुछ-कुछ भिन्नता होनी स्वाभाविक है। तथापि ऊपर बताये हुए 'सेर' और 'गज़' का प्रचार होने से समस्त देश के व्यापार में बड़ी सुविधा हो गई है।

व्यापार-नीति—विदेशों से व्यापार करने में किस प्रकार की नीति बर्ती जाय, इसका निश्चय सरकार करती है। यह नीति भिन्न-भिन्न समय में तथा भिन्न-भिन्न वस्तुओं के सम्बन्ध में बदलती रहती है। कभी-कभी किसी देश की सरकार कुछ विदेशी वस्तुओं पर ऐसा कर लगा देती है जिससे वे इतनी महँगी हो जायँ कि उस देश में

उनकी खरीद बिलकुल न हो सके, अथवा बहुत ही कम हो सके, और, इस प्रकार वहाँ के स्वदेशी उद्योग-धंधो की उन्नति में सहायता पहुँचे। इसे 'संरक्षण ('प्रोटेक्शन') नीति कहते हैं। इस नीति को व्यवहार में लानेवाली सरकार कभी-कभी अपने देश के कला-कौशल और उद्योग धंधों के लिए कारखानेवालों को पुरस्कार या सहायता भी देती है। इसे अंगरेजी में 'बाउंटी' कहते हैं। जिन देशों के उद्योग-धन्धे गिरी हुई हालत में हों, उन्हें सरक्षण नीति से बड़ा लाभ होता है।

जिन देशों में उद्योग-धन्धे उन्नत अवस्था में हों, जो विदेशी माल का मुक़ाबिला आसानी से कर सकते हों, वहाँ सरकार कर लगाने में स्वदेशी या बिदेशी वस्तुओं में कोई भेद-भाव नहीं रखती, जैसे अपना माल अन्य देशों को स्वतन्त्रतापूर्वक जाने दिया जाता है, वैसे ही दूसरे देशों का माल अपने देश में बे रोकटोक आने दिया जाता है। इस प्रकार की नीति को 'मुक्त व्यापार' या 'फ्री ट्रेड' नीति कहते हैं। भारतवर्ष के उद्योग-धन्धे उन्नत अवस्था में नहीं हैं, तथापि यहाँ इङ्गलैंड की तरह प्रायः मुक्त-व्यापार-नीति ही काम में लायी जाती है। इसमें अभी तक विशेषतया यह ध्यान रखा जाता है कि इङ्गलैंड को हानि न पहुँचे। अच्छा, अब तुम समझ गये होगे कि व्यापार-नीति के दो भेद हैं, संरक्षण नीति और मुक्तव्यापार नीति। इनके विषय में विशेष बातें तुम पीछे जान सकोगे।

———

पन्द्रहवाँ पाठ

रुपया-पैसा और बैंक

पाठको ! पिछले पाठ में तुम व्यापार के बारे में कुछ बातें पढ़ चुके हो। व्यापार कैसे किया जाता है ? तुम्हें भोजन वस्त्र, कागज कलम, मकान आदि बहुत सी चीज़ों की ज़रूरत होती है। ये सब चीज़ें तुम स्वयं नहीं बना सकते। तुम्हें कुछ ऐसी वस्तुओं की भी आवश्यकता होती है, जो दूसरों की बनायी हुई हों। ये वस्तुएँ तभी मिल सकती हैं, जब तुम उनके बदले में अपनी अपनी चीज़ दो। समाज में रहनेवालों का इस अदल-बदल के बिना गुजारा नहीं ह ता।

रुपया-पैसा; विनिमय का माध्यम—पदार्थों का यह अदल-बदल हर जगह और हर समय सुभीते से नहीं हो सकता। सम्भव है, जो वस्तु हम देना चाहें, उसकी दूसरे को ज़रूरत न हो, अथवा यदि उसे ज़रूरत भी हो तो उसके पास हमारी जरूरत की चीज़ न हो। उदाहरण के लिए कल्पना करो कि हमारे पास सेर भर गुड़ है, हम उसे देकर नमक लेना चाहते हैं। अब, हमें ऐसे आदमी की तलाश करनी है जिसे गुड़ की जरूरत हो, और जिसके पास हमें देने के लिए नमक भी हो। ऐसा आदमी हर समय आसानी से नहीं मिल सकता। यदि किसी आदमी को गुड़ की ज़रूरत है परन्तु उसके पास नमक नहीं है, और रुई है, तो उससे हमारा काम नहीं चलेगा। यदि हम उससे रुई ले लेंगे, तो हमें ऐसे आदमी को तलाश करना

होगा जो हमसे रुई लेले और बदले में हमें नमक दे सके। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि चीज़ों के अदल-बदल में बड़ी कठिनाई उपस्थित होती है। इसे दूर करने के लिए मुद्रा या रुपये पैसे से काम चलाने की बात सोची गयी। जो वस्तु हमें देनी हो, उसे बेचकर हम रुपया ले लेते हैं और फिर उस रुपये से, जिस चीज की हमें जरूरत होती है, वह मोल ले लेते हैं। यदि रुपया न हो, तो माल लेने और देनेवाले आदमियों को बड़ी झंझट रहे। रुपया उनके बीच में, पड़कर, उसे दूर कर देता है। यह एक प्रकार के बिचवई, मध्यस्थ या माध्यम का काम देता।

माल की खरीद-बेच (क्रय-विक्रय) को 'विनिमय' कहते हैं। विनिमय का अर्थ बदला करना है, परन्तु अब यह शब्द उसी अदल-बदल के काम के लिए उपयोग किया जाता है, जहाँ रुपये से काम लिया जाय। अतः रुपये पैसे को 'विनिमय माध्यम' कहा जाता है।

भारतवर्ष में पहले सरकार जनसाधारण से सोना-चाँदी और ढलाई-खर्च लेकर उनके वास्ते सिक्के ढाल देती थी। परन्तु पिछले पचास वर्ष से यह बात नहीं रही। अब सरकार को जितने सिक्कों के ढालने की आवश्यकता मालूम होती है, उतने वह स्वयं ढालती है।

नोट अर्थात् कागजी मुद्रा—पाठको! तुमने नोट देखा ही होगा। सम्भव है, तुमने नोट देकर कोई चीज़ मोल ली हो। नोट एक प्रकार का कागज ही होता है, पर उस कागज में और साधारण कागजों में फरक होता है। नोट पर विशेष प्रकार की सरकारी छाप होती है, उस पर एक खास नम्बर होता है, तथा उसमें यह लिखा रहता है कि सरकार इस बात की प्रतिज्ञा करती है कि वह इस कागज

के बदले में उस पर लिखी हुई रकम की देनदार है।* इसलिए उस कागज की इतनी कीमत होती है।

भारतवर्ष में नोट एक, पांच, दस, पचास, सौ, पांच सौ, एक हजार या दस हजार रुपये के होते हैं। सौ रुपये, या इससे अधिक, के नोट आदि खराब या गुम हो जायँ तो उनका नम्बर बताने पर, उनका रुपया सरकारी खजाने से मिल सकता है इसलिए इन नोटों का व्यवहार करने वालों को चाहिए कि इनका नम्बर अपने पास लिख रखें।

अच्छा, रुपये-पैसे होते हुए नोट क्यों चलाये जाते हैं। बात यह है कि बड़े व्यापार में सोने-चाँदी के बहुत से सिक्के एक स्थान से, किसी दूसरे दूर के स्थान पर ले जाने में बड़ी असुविधा प्रतीत होती है। इस असुविधा को दूर करने के लिए लोगों को क्रमशः धातुओं का आधार छोड़कर, कागजी मुद्रा अर्थात् हुंडियों या नोटों से काम निकालने की सूझी। नोट सरकार बनाती है, और हुँडियाँ व्यापारी या महाजन लोग, अपने आपस के व्यवहार के लिए चलाते हैं। कागजी मुद्रा वास्तव में सिक्का नहीं है, यह केवल एवजी सिक्का है, जो चलानेवाले के विश्वास या साख पर चलता है। इसे कोई उसी दशा में स्वीकार करता है, जब उसे यह निश्चय होता है कि उसे आवश्यकता होने पर, इसके एवज या बदले में, इस पर लिखे मूल्य के सिक्के मिल जायँगे।

हुँडियों का चलन तो यहाँ के व्यापारियों में बहुत समय से है, पर नोटों का चलन अंगरेजों के समय में ही हुआ है। हुँडियों की

* एक रुपये के नोट पर यह नहीं लिखा होता।

अपेक्षा नोट दूर-दूर, तथा बहुत आदमियों में चलते हैं। कारण, कि नोटों को सरकार चलाती है; और सरकार को देश के सब आदमी जानते हैं; सब का उस पर विश्वास होता है, इसलिए कोई उन्हें लेने से इनकार नहीं करता। हाँ, एक राज्य के नोटों का दूसरे राज्य में कुछ मूल्य नहीं होता। आवश्यकता से अधिक होने पर तो नोट अपने राज्य में भी चलने कठिन हो जाते हैं।

बैंक—तुम्हें यह भी जान लेना चाहिए कि रुपया-पैसा कहाँ और और कैसे जमा हो सकता है, जिससे वह सुरक्षित रहे, उसके चुराये जाने आदि का भय न हो, तथा होने पर वह मिल भी सके। जो संस्थाएँ लोगों का रुपया जमा करती हैं और उनको आवश्यकतानुसार देती हैं, उन्हें बैंक कहते हैं। बैंकों का नाम तुमने सुना ही होगा। इनसे केवल हमारा जमा किया हुआ ही रुपया नहीं मिलता, उससे कुछ अधिक मिलता है, कारण कि वे उस रुपये का सूद भी तो देते हैं। फिर जिन आदमियों का वहाँ रुपया जमा न हो, वे भी विश्वास-पात्र होने की दशा में, बैंकों से रुपया उधार ले सकते हैं।

बैंकों का काम—पाठको! सम्भव है, तुम्हारे शहर या गाँव में कोई बैंक, या उसकी कोई शाखा हो। तुम जानते ही हो कि महाजन लोग बहुधा कोई जेवर आदि गिरवी रखकर, काग़ज़ लिखवाकर किसानों या मजदूरों आदि को ब्याज पर रुपया उधार दिया करते हैं। बैंक भी ऐसा ही करते हैं, परन्तु महाजन केवल उधार देते हैं, वे लेते शायद ही कभी हैं; और बैङ्क ब्याज पर रुपया लेते भी रहते हैं। इस प्रकार बैंकों का काम रुपया उधार लेना, उधार देना, हुंडी पुर्जे आदि खरीदना, या बेचना है। जो लोग अपनी बचत का कुछ

और उपयोग नहीं करते, उनसे बैंक कुछ कम सूद पर रुपया उधार ले लेते हैं, और उसे ऐसे आदमियों को कुछ अधिक सूद पर उधार दे देते हैं, जिन्हें उनकी आवश्यकता हो। इस प्रकार बैङ्कों से, जमा करनेवालों, तथा उधार लेनेवालों, दोनों को लाभ होता है।

प्रत्येक बैङ्क में रुपया जमा करने तथा उसमें से लेने के कुछ नियम होते हैं। जो रुपया चालू हिसाब में जमा किया जाता है (जिसे जमा करनेवाला जब चाहे ले सके), उस पर सूद बहुत कम मिलता है, और जो रुपया किसी खास मुद्दत (साल छः महीने) के लिए जमा किया जाता है, उस पर सूद अधिक मिलता है, क्योंकि बैंकवाले उसे किसी स्थायी काम में लगाकर उससे अधिक लाभ उठा सकते हैं।

भारतवर्ष के बैंक—भारतवर्ष में कई प्रकार के बैंक हैं, रिजर्व बैङ्क इम्पीरियल बैंक, एक्सचेंज बैङ्क, 'जोयन्ट स्टाक' या मिश्रित पूँजी के बैङ्क, सेविंग बैंक तथा 'कोआपरेटिव' या सहकारी बैंक। इस पाठ में तुम्हें सेविंग बैंकों का हाल बताया जायगा। सहकारी बैंकों के विषय में, अगले पाठ में लिखा जायगा, अन्य प्रकार के बैङ्कों की बातें तुम्हें पीछे ज्ञात हो जायँगी।

भारतवर्ष में बैंकों की संख्या तथा कार्य धीरे धीरे बढ़ रहे हैं, तथापि अभी बैंक बहुत कम हैं। यहाँ ऐसे बैंकों की बहुत ही जरूरत है, जिनका काम खास तौर से खेती तथा शिल्प की उन्नति करना, हो। नागरिकों को इनकी स्थापना तथा प्रचार में सहयोग करना चाहिए।

सेविंग बैङ्क—पाठको! डाक और तार के पाठ में तुम यह पढ़

चुके हो कि डाकखानों में सेविंग बैंक का भी काम होता है, वहाँ अपनी बचत का रुपया आसानी से जमा कर सकते हैं। सम्भव है, तुम्हें भी कुछ रुपया जमा कराने की इच्छा हो, इसलिए इनके मुख्य नियम यहाँ दिये जाते हैं; अन्य बातें डाकखाने से मालूम हो सकती हैं।

१—कोई आदमी, अपने नाम से या अपने किसी रिश्तेदार या नौकर आदि के नाम से, अलग-अलग खाता खोल सकता है।

२—नाबालिग लड़के भी अपने नाम से रुपया जमा करा सकते हैं; उन्हें रुपया वापिस लेते समय दूसरे आदमी की गवाही या शहादत करानी होती है।

३—एक बार में कम से कम ।) तक जमा किया जा सकता है।

४—कोई मनुष्य ५०००) रुपये तक जमा कर सकता है, वह चाहे तो एक ही बार में इतनी रकम जमा कर सकता है।

५—एक सप्ताह में, सोमवार से लेकर शनिवार तक रुपया केवल एक बार वापिस मिल सकता है; हाँ, जमा तो तुम हर रोज करा सकते हो।

६—रुपया जमा करानेवालों को एक 'पास बुक' मिलती है, उसमें रुपया जमा करने या वापिस लेने की तारीख आदि का ब्योरा लिखा जाता है। इसे देखकर डाकखानेवाले रुपया देते हैं। हर एक 'पासबुक' का अलग-अलग एक नम्बर होता है। यदि किसी की 'पासबुक' खो जाय तो यह नम्बर बतलाने पर तथा १) फीस देने पर उसे दूसरी पासबुक मिल सकती है।

७—जितना रुपया ज़मा होता है, उस पर प्रति मास दो आने

सैकड़ा के हिसाब से सूद दिया जाता है। जो रुपया साल भर या अधिक समय के लिए जमा किया जाता है, उस पर सालाना सूद २) रु० सैकड़ा मिलता है। सूद की यह दर समय-सयय पर बदलती रहती है। सूद का हिसाब हर साल १५ जून के बाद होता है।

जिन्दगी का बीमा—रुपया-पैसा जमा करने का एक उपाय अपनी जिन्दगी का बीमा करना भी है। जो आदमी यह बीमा कराना चाहे, उसे चाहिए किसी अच्छी बीमा-कम्पनी के एजंट से मिलकर सब बातें मालूम कर ले। उसे निश्चित किये हुए समय पर अपनी किस्त का रुपया देते रहना होगा। एक किस्त साल, छः महीने, तीन महीने या एक-एक महीने की हो सकती है। सब के लिए किस्त की रकमें बराबर नहीं होतीं; बीमे की रकम तथा जमा करनेवालों के सुभीते के अनुसार, छोटी-बड़ी होती हैं। जिन लोगों की थोड़ी आमदनी है, वे भी कोशिश करके किस्त के लिए कुछ बचत कर सकते हैं। बीमे की मियाद पूरी होने पर बीमा करानेवाले को, बीमे की इकट्ठी रकम मिल जाती है। इसके सिवाय उसे, जैसा नियम हो कुछ मुनाफे या सूद की रकम भी मिलती है।

बैंक में भी तो बचत का रुपया जमा हो सकता है, और उस पर भी सूद मिल सकता है, फिर बीमा कराने में विशेष लाभ क्या है? देखो, बैंक में जमा कराना न कराना तो सदा तुम्हारी इच्छा पर रहता है। मानलो तुमने एक बार कुछ रुपया जमा करा दिया, फिर तुम्हें कोई कहनेवाला नहीं, कि इतने समय में इतना रुपया जमा करना ही चाहिए। परन्तु बीमे में यह बात नहीं है। उसमें तो किस्त का समय होने पर तुम्हें जमा कराना ही होगा, नहीं तो पहला जमा किया हुआ

रुपया डूबने की शंका रहेगी; इस भय से, जैसे बनेगा, तुम उसके लिए बचत करोगे ही।

बीमे में दूसरी विशेषता यह है कि बैंक का रुपया तो तुम चाहे जब वापिस ले सकते हो। इसलिए यह भी सम्भव है कि तुम्हारे पास बड़ी रकम होने ही न पाये। परन्तु बीमे में यह नहीं होता; उसमें तो मियाद पूरी होने पर, तुम्हें पूरी रकम मिलेगी। एक विशेषता और भी है। बैंक में तो जितना रुपया किसी का जमा होगा, उतना ही वह लेने का हकदार होगा। परन्तु बीमे में यह बात है कि अगर बीमा करानेवाले की, बीमे की मियाद से पहले ही मौत हो जाय तो जितने का उसने बीमा कराया हो, वह पूरी रकम उसके बाल-बच्चों को मिलेगी, यह नहीं कि जितना जमा हुआ हो, सिर्फ उतना ही मिले। मानलो किसी ने बीस साल के लिए दो हजार का बीमा कराया तो हर साल उसे सौ रुपये से कुछ कम जमा कराना होगा; अब अगर दो साल में ही उसकी मृत्यु हो जाय तो जमा तो दो सौ रुपये से कम हुआ, पर उसके बालबच्चे पूरी दो हजार की रकम, बीमा-कम्पनी से, ले सकेंगे।

सोलहवाँ पाठ

सहकारी समितियाँ

सहकारिता—पहले बताया जा चुका है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। प्रायः आदमी मिल-जुलकर गाँवों या नगरों में रहते हैं। मनुष्यों में आपसी सहयोग या सहकारिता का भाव जितना

अधिक होता है, उतना ही वे अधिक उन्नति कर सकते हैं। भारतवर्ष में अति प्राचीन काल से लोगों में इसका व्यवहार है। कुछ गाँवों में सब किसान मिलकर एक या दो कोल्हू मोल या किराये पर ले लेते हैं, और बारी बारी से ईख पेर लेते हैं। कहीं-कहीं कई-कई किसान मिल कर खेती करते हैं, और फसल को, अपने श्रम या बैलों के उपयोग के हिसाब से, बाँट लेते हैं। कहीं-कहीं तालाब खोदने, सड़क, मंदिर, धर्मशाला आदि बनाने तथा इनकी मरम्मत का काम भी मिलकर किया जाता है। पंचायती मंदिर आदि की प्रथा अभी तक प्रचलित है, उससे भी सहकारिता का परिचय मिलता है।

सहकारी समितियाँ—पारस्परिक सहयोग या सहकारिता का भाव रखकर जो समितियाँ बनायी जाती हैं, उन्हें सहकारी समितियाँ कहा जाता है। अपने निर्वाह तथा उन्नति के लिए हमें विविध वस्तुओं की आवश्यकता होती है, इसलिए वे वस्तुएँ पैदा की जाती हैं, या बनायो जातो हैं, यह पहले समझाया जा चुका है। जो लोग वस्तुएँ उत्पन्न करते हैं, वे उत्पादक कहे जाते हैं; और जो उनका खर्च या उपभोग करते हैं, वे उपभोक्ता। उत्पादक और उपभोक्ता ये दोनों समूह अपनी सहकारिता समिति बना कर बहुत लाभ उठा सकते हैं। उत्पादक-सहकारिता-समिति का उद्देश्य यह रहता है कि माल पैदा करने में खर्च कम-से-कम हो, उसमें हर तरह की किफायत की जाय और पीछे उसे अच्छे दामों में बेचा जाय, जिससे मुनाफा अधिक से अधिक हो। उपभोक्ता-सहकारी-समिति का उद्देश्य यह होता है कि वस्तुओं को कम-से-कम मूल्य में खरीदें; जहाँ से वे सस्ती मिल सकें, वहाँ से ही खरीदी जायँ, जिससे समिति के सदस्यों को वे यथा-

सम्भव कम मूल्य में, किफायत से दी जा सकें। समिति अपने सब सदस्यों के लिए वस्तुएँ खरीदती है, इसलिए वह स्वभावतः उन्हें बड़े परिमाण में खरीदती है। इकट्ठी लेने से चीजों के भाव में कुछ रियायत हो जाती है; दूसरे स्थान से मँगानी हों तो, बड़े परिमाण में होने के कारण, पैकिंग खर्च तथा भाड़ा आदि भी औसतन कम पड़ता है। इस प्रकार उपभोक्ता-समिति को, अलग-अलग आदमियों की अपेक्षा, चीजें सस्ती पड़ती हैं, और वे अपने सदस्यों को उन्हें कम मूल्य में, किफायत से दे सकती हैं।. उत्पादक और उपभोक्ता दोनों प्रकार की सहकारी समितियाँ दलालों को हटा देना चाहती हैं।

सहकारिता के सिद्धान्तों का उपयोग अनेक प्रकार से हो सकता है। इसलिए ऊपर बतायी हुई दो प्रकार की सहकारी समितियों के अन्तर्गत कई तरह की समितियाँ होती हैं। उदाहरण के लिए कृषि-सहकारी-समितियाँ, गृह-निर्माण-सहकारी-समितियाँ, दूध-सहकारी-समितियाँ, सिंचाई-सहकारी-समितियाँ, क्रय-सहकारी-समितियाँ, विक्रय-सहकारी-समितियाँ। शिक्षा, स्वास्थ्य, सफाई, ग्राम-सुधार आदि चाहे जिस कार्य के लिए सहकारी समितियाँ बनायी जा सकती हैं। इन विविध समितियों के विषय में ब्यौरेवार बातें तुम पीछे जान लोगे; सहकारी साख-समितियों के विषय में तो आवश्यक बातें अभी जान लेनी चाहिए; इनका जनसाधारण से घनिष्ठ या गहरा सम्बन्ध है।

साख की सहकारी समितियाँ—पहले कहा जा चुका है कि भारतवर्ष में अधिकतर जनता किसानों की है, और, ये बहुत गरीब हैं; इनकी आर्थिक दशा बहुत खराब है। इन्हें खेती आदि के लिए रुपये की बहुत जरूरत होती है, परन्तु इनकी साख कम होने के कारण इन्हें

महाजन बहुत अधिक सूद पर रुपया उधार देते हैं। इसका उपाय क्या है?

तुम जानते हो कि जो पूँजी एक मनुष्य को अपनी साख पर, कभी-कभी बहुत प्रयत्न करने पर भी, नहीं मिल सकती वही कई मनुष्यों की साख पर कम ब्याज में, और आसानी से मिल सकती है। इसलिए नागरिकों को सहकारी साख समितियाँ स्थापित करने की बड़ी आवश्यकता है, जो उनकी साख बढ़ावें। इन समितियों का उद्देश्य यह होता है कि किसानों की कर्जदारी दूर हो, वे फ़िज़ूलखर्ची न करें, और उन्हें ऐसे उपयोगी कार्यों के लिए रुपया उधार मिल सके, जिनसे उनकी आमदनी बढ़े।

सरकारी कानून—भारतवर्ष में सहकारी साख समितियों का कानून बना हुआ है; इसकी कुछ मुख्य-मुख्य बातें इस प्रकार हैं:—
१—किसी गाँव या शहर के एक ही जाति या पेशे के, अठारह साल से अधिक उम्र के कम-से-कम दस आदमी मिलकर सहकारी साख समिति बना सकते हैं। (२) समिति के सदस्य (मेम्बर) वे ही आदमी होने चाहिए, जो एक-दूसरे को अच्छी तरह जानते हों। (३) समिति का कार्य अपने सदस्यों की अमानत जमा करना, दूसरे आदमियों से एवं अन्य समितियों से उधार लेना, तथा अपने सदस्यों को आवश्यकतानुसार उधार देना, है। (४) समिति का प्रत्येक सदस्य अपनी समिति का कुल कर्ज चुकाने का जिम्मेवार होता है। (५) समिति इन सिद्धांतों को बर्तते हुए, अपनी स्थानीय परिस्थिति के अनुसार यथोचित उप-नियम बना सकती है। (६) इन समितियों की देखभाल करने तथा इनके काम को बढ़ाने के लिए, हर एक प्रान्त में इनका एक प्रधान

अधिकारी रहता है उसे रजिस्ट्रार कहते हैं।

सरकार ने इन समितियों को कई सुविधाएँ दे रखी हैं। इन समितियों तथा इनके सदस्यों की ओर से, समिति के सम्बन्ध में जो दस्तावेज लिखे जायँ, उनका स्टाम्प खर्च, तथा जो रजिस्ट्री करायी जायँ उनका रजिस्टरी-खर्च माफ़ है। सहकारी साख-समितियों के मुनाफ़े पर इनकमटैक्स भी माफ़ है। एक समिति अपने ज़िले की दूसरी समिति को रुपया, बिना खर्च भेज सकती है। समिति के किसी सभासद का कोई हिस्सा कभी कुर्क नहीं किया जा सकता। रजिस्टरी हो जाने पर समिति को ज़िले के सेंट्रल बैङ्क से निर्धारित सूद पर रुपये उधार मिलने लगते हैं।

अन्य बातें—समितियाँ रुपया उधार लेकर, उसे कुछ अधिक सूद पर अपने सदस्यों को दे देती हैं। तथापि इस सूद की दर उस दर से कम होती है, जिस पर किसानों को आम तौर से रुपया उधार मिल सकता है। इन समितियों से सर्वसाधारण को और भी लाभ होता है। लोगों को आपस में मिलकर काम करने की आदत पड़ती है। इससे उनमें पारस्परिक प्रेम और एकता की वृद्धि होती है। इनके सभासदों को मितव्ययिता का अभ्यास हो जाता है, इससे उनकी आर्थिक दशा सुधरती है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इन समितियों के बढ़ने की बड़ी आवश्यकता है।

इन समितियों के लिए जो बैङ्क खोले जाते हैं, उन्हें सहकारी बैङ्क कहते हैं। इनसे सर्वसाधारण और विशेषतया किसानों का बहुत सम्बन्ध होता है, और इनका प्रचार नगरों और गाँवों में बढ़ता जा रहा है। ये बैङ्क उधार ले तो सबसे लेते हैं, परन्तु सहकारी समितियों

के सिवाय, और किसी को उधार देते नहीं। इनके दो भेद हैं, प्रान्तीय और सेंट्रल। प्रान्तीय बैङ्क सेंट्रल बैङ्कों की सहायता तथा उनकी देख-रेख करते हैं। सैंट्रल बैंक एक ज़िले की, या उसके किसी भाग की, सहकारी समितियों की सहायता करते हैं। सहकारी बैंकों का प्रबन्ध प्रायः स्थानीय आदमी ही करते हैं।

सतरहवाँ पाठ

स्वास्थ्य-रक्षा

पाठको ! तुम्हें अपने अनुभव से यह बात मालूम होगी कि जब कोई आदमी बीमार पड़ जाता है तो उसका सब सुख नष्ट हो जाता है, उससे कोई काम ठीक नहीं हो सकता। इसके अलावा, वह जिस आदमी से अपनी बीमारी में सेवा-सुश्रुषा कराता है, उसके भी काम में हर्ज होता है। इसलिए हर एक आदमी को स्वस्थ या तन्दुरुस्त रहने का प्रयत्न करना चाहिए।

स्वास्थ्य-रक्षा के उपाय—तन्दुरुस्त रहने के लिए आदमी को शुद्ध और सादा भोजन करना चाहिए, साफ़ हवा के मकान में रहना चाहिए, स्वच्छ जल पीना चाहिए, आवश्यक व्यायाम और विश्राम करना चाहिए, मन में पवित्र विचार रखने चाहिए, और अच्छी संगत में रहना चाहिए। इन बातों को समझने में कुछ कठिनाई नहीं होती, परन्तु बहुत से आदमी अपनी गरीबी और अज्ञान आदि के कारण

इन पर अमल नहीं कर सकते। उनके मकान तंग या गंदी गलियों में होते हैं, वे सड़ी-गली चीज़ें खा लेते हैं, और जिस कुएँ या तालाब पर आदमी नहाते हैं, उसका ही पानी पीते रहते हैं। इससे उनके शरीर पीले और कमज़ोर पड़ जाते हैं, और मलेरिया, प्लेग, हैज़ा आदि रोगों के घर बन जाते हैं। लोगों की गरीबी दूर करने के लिए देश में उद्योग-धंधे, कला-कौशल आदि आजीविका के साधनों का प्रबन्ध होना चाहिए। इसी प्रकार अज्ञान हटाने के वास्ते शिक्षा-प्रचार की बहुत आवश्यकता है। इनका वर्णन पहले किया जा चुका है।

कुछ आदमी ग़रीब तो नहीं होते, पर अपनी शौकीनी के कारण ही बड़ा कष्ट पाते हैं। वे अपने खानपान, रहनसहन आदि में अमीरी दिखाना चाहते हैं। उदाहरण के तौर पर वे अपने हाथ-पाँव हिलाकर काम करना नहीं चाहते, सब काम नौकरों से कराते हैं; कुछ व्यायाम या कसरत भी नहीं करते। मैदे या बेसन की तली हुई चीज़ें, या मिठाई अधिक खाते है। पान-बीड़ी, इतर-फुलेल, चाय या नशीली चीज़ों का सेवन करते हैं। फिर ये तन्दुरुस्त कैसे रहें? लोगों को संयम या सादगी से रहना चाहिए।

हमारे देश में, बाल-विवाह तथा परदे आदि की बहुतसी कुरीतियाँ भी जनता के स्वास्थ्य में बाधक होती हैं। इन बातों की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित हो रहा है, और इनमें थोड़ा-बहुत सुधार भी होता जा रहा है। परन्तु, अभी बहुत काम होना शेष है। यहाँ लोगों की औसत आयु लगभग तेईस वर्ष है, जबकि अन्य देशों में यह चालीस वर्ष, तथा इससे भी अधिक है। इसी प्रकार यहाँ फ़ी हज़ार आदमियों में से

कोई तीस आदमी हर साल मर जाते हैं, जबकि संसार में कितने ही देश ऐसे हैं, जहाँ हज़ार पीछे केवल दस-ग्यारह आदमी ही मरते हैं। स्वास्थ्य-रक्षा के कार्यों की ओर ध्यान देने से इन बातों में बहुत सुधार हो सकता है।

स्वास्थ्य-रक्षा का प्रबन्ध—शहरों में म्युनिसपैलटियों के उद्योग से स्वास्थ्य सम्बन्धी कई प्रकार के कार्य हो रहे हैं। बड़े-क़स्बों में, या शहरों में सफ़ाई का डाक्टर (हैल्थ आफ़ीसर) रहता है। गन्दे पानी के बहने के लिए नालियाँ या मोरियाँ बन रही हैं। कुछ शहरों में खुले बाज़ार और चौड़ी सड़कें भी बन रही हैं। परन्तु आवश्यकता बहुत अधिक काम की है। शहरों में मामूली हैसियत के आदमियों को साधारण किराये पर अच्छा साफ़ हवादार मकान मिलना असम्भव हो रहा है। कुछ म्युनिसपैलटियों ने इस ओर ध्यान देना शुरू किया है।

देहातों में खुली हवा का सुभीता होने पर भी, स्वास्थ्य-रक्षा का प्रश्न बहुत कठिन है। प्रायः वहाँ गन्दे पानी के बहने के लिए पक्की नालियाँ या मोरियाँ होती ही नहीं, जिधर ढलाव मिल जाता है उधर ही पानी बहने लगता है। अनेक स्थानों में रास्ते बहुत ऊँचे-नीचे या तंग हैं। नये ढङ्ग की खुली चौड़ी सड़कें वहाँ ढूँढ़ने से भी न मिलेंगी। रोगों का प्रचार बहुत अधिक है। ज़िला-बोर्ड कुछ ध्यान देते हैं, परन्तु काफ़ी धन न होने के कारण वे बहुधा बहुत ही कम काम कर पाते हैं।

म्युनिसपैलटियों और ज़िला-बोर्डों द्वारा स्वास्थ्य रक्षा के लिए लोगों को कहीं-कहीं मैजिक (जादू की) लालटेन के व्याख्यानों से

यह बतलाया जाता है कि भिन्न-भिन्न रोग किन कारणों से पैदा होते हैं, और उन्हें रोकने का क्या उपाय है। प्लेग और चेचक आदि का टीका लगवाया जाता है। अब कई जगहों में प्रतिवर्ष नियमित रूप से 'शिशु सप्ताह' मनाया जाता है; इस सप्ताह में तन्दुरुस्त बच्चों की नुमायश की जाती है, और स्त्रियों को यह समझाया जाता है कि बच्चों के स्वास्थ्य के लिए किन-किन बातों को अमल में लाया जाना आवश्यक है।

बाज़ारों में सड़ी-गली या ख़राब चीज़ें बिकने न पावें, तथा खाने-पीने की किसी चीज़ में मिलावट न हो, इसके लिए म्युनिसपैलटियों और ज़िला-बोर्डों की ओर से आवश्यक नियम बने हुए हैं। जो कोई उन्हें भंग करता है, उसे दंड दिया जाता है। नागरिकों को चाहिए कि इन नियमों का यथेष्ट पालन करें; अपने स्वार्थ या अनुचित लाभ के लिए ऐसी वस्तुओं को कदापि न बेचें, जिनसे दूसरे बन्धुओं के स्वास्थ्य को हानि पहुँचे।

सरकारी स्वास्थ्य विभाग—स्वास्थ्य-रक्षा सम्बन्धी कामों के लिए कभी-कभी म्युनिसपैलटियों और ज़िला-बोर्डों को सरकार की ओर से विशेष सहायता मिलती है। इसके अलावा सरकार का हर एक प्रान्त में इस काम के लिए एक अलग विभाग है, उसे 'सार्वजनिक स्वास्थ्य-विभाग' कहते हैं। यह विभाग अपने-अपने प्रान्त के स्वास्थ्य सम्बन्धी कामों की निगरानी करता है। प्रान्त भर में इस विभाग का जो सबसे बड़ा अधिकारी होता है, उसे सार्वजनिक स्वास्थ्य का 'डायरेक्टर' कहते हैं। उसके नीचे हर एक ज़िले में एक 'सिविल सर्जन' होता है। इसे तुम जानते ही होगे। यह ज़िले के अस्पतालों

और शफ़ाखानों को देखने के अलावा ज़िले के स्वास्थ्य सम्बन्धी कामों की निगरानी करता है, और उनके सम्बन्ध में ज़िला मजिस्ट्रेट को आवश्यक बातों की रिपोर्ट करता रहता है।

अठारहवाँ पाठ
दुर्व्यसनों का नियंत्रण

पाठको! तुम अवश्य ही अच्छे नागरिक बनना चाहते होगे। इसके लिए तुम्हें शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए, तथा स्वस्थ रहना चाहिए; शिक्षा और स्वास्थ्य के विषय में तुम इस पुस्तक में पहले पढ़ चुके हो। परन्तु, इसके अलावा इस बात की भी बड़ी आवश्यकता है कि तुम्हारा चालचलन अच्छा हो, तुम्हें कोई बुरी आदत न पड़े। इसके वास्ते, तुम्हें अच्छी संगत में रहना चाहिए। बुरी संगत से लोगों को बुरे सिनेमा, नाटक आदि देखने, ख़राब किताबें पढ़ने, जुआ खेलने, शराब या भंग आदि पीने और अफ़ीम आदि नशीली चीज़ें खाने की आदत पड़ जाती है। और, ये दुर्व्यसन बहुत हानिकारक होते हैं।

सिनेमा-नाटक—ये अच्छी शिक्षा देने वाले भी होते हैं, और, मन पर बुरा प्रभाव डालनेवाले भी। हमें बुरे दृश्यों से बचना चाहिए, और यदि हम इस बात का भी ठीक बिचार न कर सकें कि कौनसा सिनेमा या नाटक अच्छा है, और कौनसा बुरा, तो बेहतर है कि हम इन्हें बिल्कुल ही न देखें। सरकार ने नियम बना रखा है कि जो कंपनी बुरे दृश्य दिखाये, उस पर मामला चल सकता है, और उसे दंड मिल

सकता है। परन्तु साधारण बुराइयाँ कानून की पकड़ में नहीं आतीं। नागरिकों को स्वयं सोच-विचार कर, सिनेमा या नाटक का चुनाव करना चाहिए; और जो बहुत अच्छे हों उन्हें ही देखना चाहिए।

बुरी पुस्तकें—पाठको! पुस्तकों से कैसी अच्छी-अच्छी बातें मालूम होती हैं, यह तुम जानते हो। पर यह समझना कि सब पुस्तकें अच्छी ही होती हैं, चाहे जो पुस्तक उठायी और पढ़ने लग गये। बड़े दुख की बात है कि कोई-कोई लेखक उपन्यास, नाटक, किस्से-कहानी आदि की पुस्तकों में, बहुत गंदे विचार भर देता है। इससे पाठकों की बड़ी हानि होती है। यद्यपि सरकारी कानून से, बुरी पुस्तकें प्रकाशित करना अपराध है, परन्तु फिर भी समय-समय पर बहुतसी खराब पुस्तकें छपती ही रहती हैं। तुम्हें जो पुस्तकें पढ़नी हों, उनके विषय में तुम्हें अपने अध्यापकों से परामर्श कर लेना चाहिए। बड़े होने पर पुस्तक के अच्छी या बुरी होने की जाँच तुम स्वयं कर सकोगे।

जुआ—लालच बुरी बला है। आदमी झट इसके फंदे में फँस जाते हैं। वे सोचते हैं कि किसी प्रकार बिना मेहनत किये आसानी से ही, कुछ धन मिल जाय; इसलिए वे जुआ खेलने लगते हैं। यहाँ दिवाली आदि के अवसर पर, कुछ लोग जुआ खेलना मानो धर्म समझते हैं। जुए में आदमी बहुत धन-दौलत हार जाते हैं; कभी तो घर का सामान तक बिकने की नौबत आ जाती है। तुम कभी ऐसा मत सोचना कि अगर जुआ दो-चार पैसे से खेला जाय तो कुछ हानि नहीं। जुआ खेलने का विचार ही बुरा है। यह लत एक बार लगी, फिर बढ़ती ही जाती है। जीतनेवाले को अधिक धन पाने की तृष्णा हो जाती है, हारनेवाले को अपने खोये हुए धन

को पाने की इच्छा सताती है। इसलिए उचित है कि इसमें हाथ ही न डाला जाय। सरकार ने जुआ रोकने के लिए कानून बना रखा है; जो कोई जुआ खेलता पाया जाता है, उसे सजा दी जाती है।

नशीली चीज़ों का सेवन—अब नशीली चीज़ों के सेवन की बात सुनो। शराब, अफ़ीम आदि चीज़ें किसी-किसी बीमारी में, दवाई के तौर पर भी काम आती हैं; परन्तु इनका ज्यादह खर्च लोग शौकिया करते हैं। उन्हें आदत पड़ जाती है। फिर उन्हें अधिक नशे की जरूरत मालूम होती है। बहुत नशा करने पर उनकी हालत बिगड़ने लगती है। तुमने देखा होगा कि शराबियों का कैसा बुरा हाल होता है। कोई नालियों में पड़ता है कोई गाली-गलोच करता है, कोई किसी को मारता-पीटता है। अफीम, गाँजा, भंग, चरस आदि मादक पदार्थों को सेवन करनेवालों की भी ऐसी दशा होती है। उन्हें यह होश नहीं होता कि वे क्या करते हैं, और, कहाँ जाते हैं। वे अपना धन तो इन चीज़ों में नष्ट करते ही हैं, इनसे उनका शरीर भी पीला, कमजोर और अनेक बीमारियों का घर बन जाता है। इसलिए चाहे तुम्हारे मित्र कहें या रिश्तेदार, भूलकर भी इन इन चीजों के सेवन का नाम न लेना। यह भी याद रखो कि तमाखू भी बड़ा विषैला पदार्थ है। इससे शरीर को बहुत हानि पहुँचती है। दुख की बात है कि नवयुवकों में सिगरेट और बीड़ी पीने का शौक बढ़ता जा रहा है। तुम्हें इससे हर प्रकार बचना चाहिए। चाय की कम्पनियों के एजेंट चाय के प्रचार के लिए तरह-तरह के विज्ञापन देते रहते हैं, इससे चाय का प्रचार विद्यर्थियों और किसानों तथा मजदूरों—सभी में बढ़ता जा रहा है। चाय स्वास्थ्य को बिगाड़नेवाला पदार्थ है। पाठकों को इसका

सेवन कभी न करना चाहिए, और जिनको आदत पड़ गई हो उन्हें इसे छोड़ने का प्रयत्न करना चाहिए।

आबकारी विभाग—शराब, अफ़ीम, गाँजा, भंग, चरस, आदि मादक पदार्थों के सेवन की रोकथाम करने के लिए प्रत्येक प्रान्त में एक सरकारी विभाग रहता है उसे आबकारी या 'एक्साइज़' विभाग कहते हैं। प्रान्त भर में इस विभाग का सबसे ऊँचा अधिकारी एक्साइज़ कमिश्नर कहलाता है। इसके नीचे हर एक जिले में एक एक्साइज़ अफसर रहता है। इसके नीचे इस विभाग के इन्सपेक्टर, आदि कर्मचारी होते हैं। इस विभाग के कर्मचारी जगह-जगह घूमते रहते हैं, और, इस बात की जाँच करते हैं कि कोई आदमी इन पदार्थों को बिना सरकारी इजाज़त बनाता या बेचता तो नहीं; तथा, एक आदमी नियम के अनुसार जितना पदार्थ मोल ले सकता है उससे अधिक तो नहीं लेता। छोटे लड़कों के हाथ ये चीज़ें नहीं बेची जातीं। जो कोई इन नियमों को भंग करता है, उसे, आबकारी विभाग के आदमी सजा दिलाते हैं।

विशेष वक्तव्य—इस बात की बड़ी आवश्यकता है कि जगह-जगह ऐसे उपदेशों तथा मेजिक लालटेन के व्याख्यानों आदि का प्रबन्ध किया जाय, जिनसे लोग नशे की हानियों को समझें, और, इसे छोड़ने लगें। देश में कहीं कहीं ऐसी सभाएँ काम कर रही हैं, जिनका उद्देश्य मादक वस्तुओं के लिए सर्वसाधारण के मन में, घृणा पैदा करना है। इन्हें 'टेम्परेंस सभाएँ' कहते हैं। इनसे आबकारी विभाग को सहानुभूति रखनी चाहिए, तथा इन्हें सरकार की ओर से समुचित सहायता मिलनी चाहिए। कुछ देशों में इस विषय का

कानून बन गया है कि वहाँ केवल औषधियों के लिए ही मादक वस्तुएँ बनें, अधिक नहीं। अच्छा हो भारतवर्ष में भी नशीली चीजों का इतना अधिक प्रचार, सरकारी कानून द्वारा, बन्द कर दिया जाय। कहीं-कहीं प्रान्तीय सरकारें इसका कुछ प्रयत्न कर रही हैं।

उन्नीसवाँ पाठ

नागरिकों के कर्त्तव्य

पिछले पाठों में यह बताया गया है कि सरकार क्या-क्या कार्य करती है। उन कार्यों के वर्णन में नागरिकों के कुछ कर्त्तव्य भी बताये जा चुके हैं। यहाँ नागरिकों के साधारण कर्त्तव्य बताये जाते हैं।

अपनी और दूसरों की उन्नति करना—सरकार की ओर से नागरिकों की शिक्षा तथा स्वास्थ्य-रक्षा आदि के जो काम किये जाते हैं, उनसे लाभ उठाना या न उठाना नागरिकों के ही हाथ में है। उन्हें चाहिए कि अपनी शारीरिक, मानसिक, आर्थिक तथा नैतिक उन्नति के लिए स्वयं प्रयत्न करें। साथ ही इस बात का ध्यान रखें कि उनके विविध कार्यों से किसी का अहित न हो; जब कभी अनुकूल अवसर हो, उन्हें दूसरो की सेवा करनी, तथा उनकी उन्नति में सहायता देनी चाहिए। अपनी तथा दूसरों की उन्नति के लिए कई बातें आवश्यक हैं। पहले, अवकाश या फुरसत के समय के सदुपयोग का विचार करते हैं।

अवकाश का सदुपयोग—पाठको ! तुम्हें कभी लिखने-पढ़ने के काम से छुट्टी मिलती होगी। उस समय तुम क्या करते हो ? क्या व्यायाम या विश्राम करते हो ? बहुत अच्छा; एक सीमा तक ऐसा करना अत्यन्त आवश्यक है; परन्तु कभी-कभी और भी तो अवकाश मिलता होगा। यदि तुम उस समय का ठीक-ठीक उपयोग करो तो अपनी तथा दूसरों की बहुत उन्नति कर सकते हो। यदि तुम्हारे ग्राम या नगर में कोई वाचनालय या पुस्तकालय हो तो तुम्हें अवकाश के समय वहाँ जाकर विविध पत्र-पत्रिकाएँ देखनी चाहिए, या महापुरुषों के जीवनचरित्र अथवा अन्य पुस्तकें पढ़नी चाहिए। इससे तुम्हारा मनोरंजन तो होगा ही, इसके साथ-साथ अनेक विषयों में तुम्हारा ज्ञान भी बढ़ेगा। अगर तुम्हारी रुचि हो तो इस समय में तुम विविध उपयोगी विषयों पर निबन्ध लिखने का अभ्यास कर सकते हो। इससे तुम्हें अपने विचार अच्छी तरह प्रकट करने की योग्यता प्राप्त हो जायगी; सम्भव है, तुम कभी अच्छे लेखक बन सको। अवकाश के समय अपने पड़ोस के बालकों को लिखने-पढ़ने में लगाकर, तुम उनमें शिक्षा-प्रचार करने में सहायक हो सकते हो।

जब कभी तुम्हें अपने गाँव या नगर से बाहर, दूसरी जगह जाने का सुभीता हो, तो तुम्हें वहाँ की कारीगरी या प्राकृतिक तथा ऐतिहासिक दृश्य देखने चाहिए। तुम्हें चित्रकारी, बागवानी (बाग में फूलों आदि के पौधे लगाना), तैरने या बालचर (स्काउट) आदि के काम में अपना अनुराग बढ़ाना चाहिए, जिससे बड़े होने पर तुम्हें अपने अवकाश का समय काटना दूभर प्रतीत न हो; तुम उससे अपना एवं दूसरों का हित-साधन कर सको।

स्वावलम्बन—प्रत्येक नागरिक को अपना निर्वाह खुद करना चाहिए। यह बहुत अनुचित है कि हम हाथ पर हाथ धरे बैठे रहें और अपने बाप-दादा की कमायी हुई सम्पत्ति में से खायें-खर्चें; या, अन्य भाई बन्धुओं के आसरे पड़े रहें, अथवा दान या भिक्षा से अपना पेट भरें। इससे हमारी उन्नति में बाधा पड़ती है, हमारे साहस, पुरुषार्थ, और आत्म-सम्मान आदि सद्गुणों का विकास नहीं होता। साथ ही, हम दूसरों का कमाया धन खर्च करके समाज को उस लाभ से वंचित करते हैं, जो उस धन को किसी अन्य उपयोगी कार्य में खर्च करने से होता। जिन लोगों को परमात्मा ने हाथ-पाँव दिये हैं, वे दूसरों पर भार क्यों बनें! दान-दक्षिणा या सहायता लेना केवल उनके लिए ठीक है, जो अपाहज अर्थात् लँगड़े, लूले आदि होने की वजह से भरसक उद्योग करने पर भी, अपना निर्वाह नहीं कर पाते, अथवा जो अपना सब समय समाज या राज्य की उन्नति के लिये विविध उपाय सोचने या काम करने में लगाते हैं। इससे स्पष्ट है कि आमतौर से प्रत्येक नागरिक को स्वावलम्बी होना चाहिए।

मितव्ययिता—बहुत से आदमी आगे की चिन्ता नहीं करते, वे भविष्य के लिए कुछ धन बचाकर रखने की आवश्यकता नहीं समझते। वे कहा करते हैं कि जब मिलता है, तो क्यों न खायें, पीयें और मौज उड़ावें। वे भूल जाते हैं कि आज हम स्वस्थ हैं, और धन पैदा कर रहे हैं; कौन जाने, कल हम बीमार पड़ जायँ, या कोई दुर्घटना हो जाय, जिससे रोज़ी कमाना मुश्किल हो जाय, और दूसरों के सामने हाथ पसारना पड़े। निदान हमें चाहिये कि जहाँ तक बने, हर

माह अपनी आमदनी में से कुछ न कुछ बचाकर रखने की आदत डालें, जिससे आवश्यकता होने पर, जुड़ा हुआ धन हमारे काम आवे। यदि हमारे पास कुछ पैसा जमा होगा तो हम उससे दीन अनाथों आदि की सहायता भी कर सकते हैं, तथा अपने आश्रितों को दूसरों का मोहताज होने से बचा सकते हैं। धन जोड़ने के लिये देश में जगह जगह बैंक खोले जाते हैं, तथा जिन्दगी के बीमे की व्यवस्था की जाती है। इसके बारे में तुम पहले पढ़ चुके हो।

सहानुभूति और समभाव—हिन्दू हो या मुसलमान, ईसाई हो या पारसी, इस देश के सभी निवासी यहाँ के नागरिक हैं। सबको आपस में एक दूसरे से सहानुभूति और समभाव का बर्ताव करना चाहिये। देश तथा राज्य हमारा सबका है, और हम सब को मिलकर उसके कल्याण के लिए कोशिश करनी चाहिए। जिस देश के आदमी, धार्मिक या सामाजिक भेद-भाव रखने के कारण एक दूसरे से लड़ते-झगड़ते हैं, वे अपनी उन्नति में स्वयं बाधक होते हैं। किसी देश में जाति-बिरादरी, मत, सम्प्रदाय आदि की भिन्नता होते हुए भी, यदि उसमें राज्य सम्बन्धी, अर्थात् नागरिक विषयों में एकता हो, तो उसकी हमेशा उन्नति होती रहेगी। भारतीय नागरिकों को इस विषय पर समुचित ध्यान देना चाहिए।

सरकार की सहायता करना—स्वाधीन देशों में सरकार नागरिकों के हित और उन्नति के लिए होती है। ऐसी दशा में उसकी सहायता करना अपनी ही उन्नति करना है। अपनी-अपनी स्थिति के अनुसार, नागरिकों को सरकार की समुचित सहायता करनी चाहिये। जो आदमी कोई सरकारी काम करते हों, किसी कानून

बनानेवाली सभा, म्युनिसपैलटी, ग्राम बोर्ड या पंचायत आदि के सदस्य हों, अथवा, इन संस्थाओं के चुनाव में अपना मत दे सकते हों, उन्हें अपना कार्य, अपने उत्तरदायित्व को समझते हुए, सोच-विचार कर करना चाहिए।

इसके अलावा इस विषय में दो बातों का और विचार किया जाना चाहिए। सरकारी कानूनों का पालना, और सरकारी टेक्स देना। यदि नागरिक ये कार्य न करें तो शासन कार्य चल ही नहीं सकता। अच्छी सरकारें जो कानून बनाती हैं, या जो टेक्स (या कर) लगाती हैं, वे देश की सुख शान्ति और उन्नति के लिए ही होते हैं। जो आदमी कानून का पालन नहीं करते, या टेक्स नहीं देते, उन्हें दंड मिलता है। परन्तु मिले या न मिले, नागरिकों को ये कार्य अपना कर्त्तव्य समझ कर, करने चाहिए। यदि कोई कानून या टेक्स बुरा प्रतीत हो तो बड़ी उम्रवाले योग्य तथा अनुभवी नागरिकों को उसका विचार करके, आवश्यकतानुसार उसे बदलवाने या रद्द कराने का प्रयत्न करना चाहिए।

शासनपद्धति का ज्ञान प्राप्त करना—तुम यह जान चुके हो कि नागरिकों को, सरकार द्वारा किये जानेवाले विविध कार्यों से लाभ उठाना चाहिए, उन्हें सरकार की सहायता करनी चाहिए, तथा उसके अच्छे उपयोगी कायदे-कानूनों का पालन करना चाहिए। इसके लिए यह आवश्यक है कि उन्हें अपने देश के राजप्रबन्ध का ज्ञान हो। भारतवर्ष की शासनपद्धति का विशेष हाल हमारी 'सरल भारतीय शासन', तथा 'भारतीय शासन' पुस्तकों में दिया गया है, जो तुम पीछे पढ़ोगे।

बीसवां पाठ

नागरिकता की व्यावहारिक शिक्षा

पिछले पाठ में तुम यह पढ़ चुके हो कि हमें यथा-सम्भव दूसरों की सेवा करनी चाहिए। परन्तु यदि हमें सेवा करने का ज्ञान और अभ्यास नहीं है तो अवसर आने पर, हमसे इस विषय में बहुत गलतियाँ हो सकती हैं। कल्पना करो कि एक आदमी नदी में डूब रहा है, हम उसे देखते हैं। हम जानते हैं कि उसे बचाना हमारा कर्त्तव्य है। परन्तु यदि हमें स्वयं ही तैरना न आता हो, और हमने दूसरे को डूबने से बचाने का कभी अभ्यास न किया हो, तो चाहे हमारी इच्छा कितनी ही प्रबल क्यों न हो; हम उस आदमी को बचाने का कार्य अच्छी तरह नहीं कर सकते।

व्यावहारिक शिक्षा देनेवाली संस्थाएँ—इससे यह स्पष्ट है कि देश में नागरिकता की व्यावहारिक शिक्षा देनेवाली संस्थाओं का होना बहुत आवश्यक है। यहाँ ऐसी मुख्य-मुख्य संस्थाएँ तीन प्रकार की हैं:—(१) बालचर या स्काउट संस्थाएँ, (२) सेवा समितियाँ और (३) सहकारी समितियाँ। इनमें से सहकारी समितियों के विषय में पहले लिखा जा चुका है।

बालचर संस्थाएँ—बालचर संस्थाओं का उद्देश्य लोगों को सदाचारी, स्वावलम्बी, साहसी, और सेवा-व्रती बनाना है। भारतवर्ष में ये दो प्रकार की हैं:—बेडनपावल* बालचर संस्थाएँ, (२) सेवा-

*बेडनपावल उस सज्जन का नाम है, जिसने इङ्गलैण्ड में सबसे पहले बालचर आन्दोलन का श्रीगणेश किया।

समिति बालचर संस्थाएँ। दोनों के उद्देश्य और नियम प्रायः एक से ही हैं। कुछ थोड़ा सा अन्तर है। पहली की ओर सरकार का रुख अधिक है, दूसरी की सहायक अधिक जनता है, यद्यपि उसे सरकार से भी कुछ सहायता मिलती है। बेडनपावल संस्था का प्रधान स्काउट भारतवर्ष में वाइसराय, तथा यहाँ के प्रत्येक प्रान्त में, उस प्रान्त का मुख्य शासक होता है। इसके केन्द्रीय कार्यालय मद्रास और कलकत्ता में हैं। इसकी शाखाएँ प्रायः स्कूलों में, खासकर गवर्मेंट हाई स्कूलों में ही होती हैं।

सेवा-समिति स्काउट्स का मुख्य कार्यालय प्रयाग में है। इसका क्षेत्र बहुत विस्तृत है। प्राइवेट स्कूलों में इसको ही टोली होती हैं। अनेक शहरों के मोहल्लों और गाँवों में भी इसकी शाखाएँ हैं। इसके द्वारा विद्यार्थियों के अलावा अन्य युवक भी शिक्षा पाते हैं। तरह-तरह के खेल कसरत से उनमें जिन्दादिली साहस और स्फूर्ति बढ़ायी जाती है। कभी आग लगने का नकली दृश्य उपस्थित करके बालचरों को उसे बुझाने तथा वहाँ के आदमियों, बच्चों और सामान की रक्षा करने की क्रियात्मक या अमली शिक्षा दी जाती है। कभी उन्हें इस बात का अभ्यास कराया जाता है कि जल में डूबते हुए आदमी को किस प्रकार बचाया जाय, अथवा ज़ख्मी आदमी की मरहम-पट्टी तथा अन्य सेवा-सुश्रूषा किस तरह की जाय। निदान, बालचरों को तरह-तरह से, सेवा करने का अनुभव कराया जाता है।

बालचर सम्बन्धी नियम निम्नलिखित हैं:—(क) बालचर की बात-व्यवहार का विश्वास किया जाता है। (ख) वह महेश (परमात्मा), देश, नरेश, माता पिता, गुरू, स्वामी, साथियों तथा अपने अधीन

व्यक्तियों के प्रति वफ़ादार होता है। (ग) वह दूसरों की सहायता करता है। (घ) वह सब का मित्र, तथा अन्य बालचरों का बन्धु होता है, चाहे वे किसी भी वर्ण, धर्म या जाति के हों। (च) वह सुशील और नम्र होता है। (छ) वह पशु पक्षियों पर दया करता है। (ज) वह आज्ञाओं का पालन करता है। (झ) वह सब कठिनाइयों में हँसमुख रहता है। (ट) वह मितव्ययी होता है। (ठ) वह मन वचन तथा कर्म से पवित्र होता है।

सेवा-समितियाँ—इनके कुछ सदस्य बालचर संस्थाओं की शिक्षा पाये पाये हुए होते हैं। इनके कार्य स्थानीय आवश्यकताओं तथा सुविधाओं के अनुसार भिन्न-भिन्न होते हैं, यथा स्टेशनों पर पानी पिलाना मेले-तमाशों में भूले-भटके स्त्री-बच्चों को रास्ता बताना, अथवा उन्हें उनके सम्बन्धियों के पास पहुँचाना, रोगियों को दवा देना, लावारिस मुर्दों को जलाना, आग बुझाना, इत्यादि। ये जनता में शिक्षा-प्रचार के लिए कहीं-कहीं अपनी शक्ति के अनुसार, वाचनालय, या रात्रि-पाठशालाएँ भी खोलती हैं जिनमें इनके कुछ सदस्य अवैतनिक सेवा किया करते हैं। कहीं-कहीं इन सस्थाओं को म्युनिसपैलटियों या ज़िला-बोर्डों आदि से कुछ सहायता मिलती है, अथवा बाज़ार वाले तथा अन्य व्यक्ति चन्दा आदि करके इनकी सहायता करते हैं। अधिकांश सेवा-समितियों के संगठन और और आर्थिक स्थिति में सुधार की आवश्यकता है।

अन्य संस्थाएँ—इनके अतिरिक्त, देश के भिन्न-भिन्न भागोंमें कुछ संस्थाएँ खास उद्देश्य से काम कर रही हैं, तथा 'सोशल सर्विस लीग' (समाज-सेवा संघ), बम्बई; जीव-दया संघ, बम्बई; डेकन

ए ज्यूकेशन सोसायटी' (दक्षिण शिक्षा समिति), पूना; 'सर्वेंट्स-आफ-दी-पीपल्स सोसायटी' (लोक सेवक समिति), लाहौर; हिन्दुस्तानी सेवा दल, हुबली (करनाटक); कौमी सेवा दल; अखिल भारतवर्षीय ग्रामोद्योग संघ और चर्खा संघ आदि। राष्ट्रव्यापी महान राष्ट्रीय संस्था कॉंग्रेस को तुम जानते ही होगे। इन विविध संस्थाओं के विषय में विशेष बातें तुम्हें पीछे मालूम हो जायँगी।

राजप्रबन्ध सम्बन्धी शिक्षा—राजप्रबन्ध संबधी कितनी ही बातें ऐसी हैं, जिनकी शिक्षा विद्यार्थी-जीवन में दी जा सकती है। कुछ समय से इस ओर ध्यान दिया जाने लगा है। कहीं-कहीं कुछ संस्थाओं में प्रति सप्ताह सभा होती है। इसमें मुख्य अध्यापक उपस्थित तो रहता है, परन्तु केवल दर्शक के रूप में। कार्य संचालन करते हैं, विद्यार्थी ही। सभा में किसी नागरिक विषय पर वाद-विवाद होता है। कभी-कभी राज्यप्रबन्ध सम्बन्धी साधारण घटनाओं की नकल या नाटक किया जाता है। उदाहरण के लिए यह दिखाया जाता है कि एक आदमी कुछ अपराध करता है, इस पर पुलिस क्या-क्या कारवाई करती है; और अदालत में उसके विषय में किस तरह विचार होता है। अथवा, किसी पद के लिए एक आदमी की जरूरत है, उसका किस प्रकार विज्ञापन दिया जाता है, फिर उम्मेदवारों की दरख्वास्तों पर किस तरह विचार किया जाता है। कभी-कभी यह दिखाया जाता है कि एक निर्वाचक-संघ से किसी आदमी का चुनाव करने का क्या ढङ्ग होता है। इन बातों से युवकों को अपने विद्यार्थी जीवन में ही उन नागरिक विषयों का व्यावहारिक ज्ञान हो जाता है, जो स्कूल छोड़ने के बाद उनके सामने उपस्थित होंगे।

परिशिष्ट—१

मेरा प्यारा गांव

सफाई और शिक्षा की बात

भारतवर्ष गाँवों का देश है। यहाँ की नब्बे प्रतिशत जनता गाँवों में रहती है। सौभाग्य से इस समय जगह जगह गाँवों के सुधार की चर्चा है। यदि यह कार्य नेकनीयती और लगन से किया जाय तो देश की असली उन्नति होगी। प्रत्येक भारतवासी का कर्त्तव्य है कि ग्राम-सुधार के प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करे। यह क्षणिक मन-बहलाव की बात नहीं है। यह हमारे जीवन का ज्वलन्त विषय है। यह इस युग की प्रधान समस्या है। गाँवों के उद्धार में प्रत्येक विचारशील व्यक्ति की सहानुभूति होनी चाहिए, चाहे वह गाँव का न होकर शहर का ही क्यों न हो, और, यह सहानुभूति केवल जबानी जमाखर्च न होकर क्रियात्मक रूप से होनी चाहिए। हाँ, सुधार कार्य की सफलता विशेषतया गाँववालों के उद्योग पर ही निर्भर होगी। और, इस महान यज्ञ में हरेक आदमी को अपने-अपने हिस्से का काम करना चाहिए। कोई आदमी ऐसा न होना चाहिए जो यह समझे कि मैं किस योग्य हूँ, मैं क्या कर सकता हूँ, ग्राम-सुधार का कार्य तो राज्य या सरकार का है।

यह ठीक है कि राज्य या सरकार का इस दिशा में उपेक्षा करना अपने

दायित्व की अवहेलना करना है। परन्तु हमारा कार्य उसकी आलोचना करना ही न होकर अपने हिस्से का कार्य पूरा करना भी है। उदाहरण के तौर पर मैं एक घर में रहता हूँ। यह घर बहुत छोटा, कच्चा इकमंजिला और छप्पर की ही छतवाला है। यह मेरी गरीबी का जीता-जागता प्रमाण है। इसके लिए मैं दोषी नहीं हूँ। परन्तु क्या इसे साफ़-सुथरा रखना मेरा कर्त्तव्य नहीं है। क्या मैं यह कहकर अपनी जिम्मेदारी से बच सकता हूँ कि गाँव में और भी तो अनेक घर गंदे हैं? माना कि गाँव भर ही गन्दा है, पर गाँव की गन्दगी का उस सीमा तक तो मैं ही जिम्मेवार हूँ जहाँ तक उसका मुझसे और मेरे घर से सम्बन्ध है। मुझे अपने घर को साफ़ रखना चाहिए, और बाहर से भी घर साफ़ रखने की ओर काफी ध्यान देना चाहिए। हाँ, अपना घर साफ़ रखने का अर्थ यह नहीं है कि उसका कूड़ा गली में, या पड़ोसी के घर के सामने फेंक दिया करूँ। नहीं, मुझे चाहिए कि सबेरे ही अपने घर का कूड़ा बटोर कर उसे एक खास स्थान पर डालूँ। अपने घर को साफ करके दूसरों के घरों के सामने कूड़ा फेंकने की बात बहुत खराब है। मुझे तो चाहिए कि अपने पड़ोसी के घर की सफाई में भी सहायता दूँ। यदि मैं मदद न दे सकूँ तो मुझे बाधा तो न डालनी चाहिए। अस्तु, यदि मैं अपना घर बाहर और भीतर से साफ रखता हूँ तो मैं गाँव की सफाई में भाग लेता हूँ, और वह मेरा अनिवार्य कर्त्तव्य है। मुझे सफाई की कोरी बातें न करके अच्छा उदाहरण उपस्थित करना चाहिए। मैं गरीब भले ही कहा जाऊँ, पर गन्दगी-पसन्द आदमियों में तो मेरी गिनती कभी न होनी चाहिए। मेरा रहनसहन ऐसा अच्छा होना चाहिए कि मेरे पड़ोसी की सफाई

की रुचि सुधर जाय, वह भी सफाई में मेरा अनुकरण करे। मोहल्ले में जब दो घर साफ-सुथरे रहने लगेंगे तो दूसरों पर भी अच्छा प्रभाव पड़ेगा; धीरे-धीरे गाँव भर में सफाई अधिक रहने लगेगी। मेरा गाँव गन्दा रहे, यह मेरे लिए लज्जा की बात है; जहाँ तक मेरा वश चलेगा मैं इसकी गन्दगी दूर करने का प्रयत्न करूँगा। गाँव की सार्वजनिक सफाई के लिए जो भी योजना बनेगी, उसमें मैं हृदय से सहायता करूँगा। मैं स्वयं भी अपने ग्राम-बंधुओं से इस विषय में समय-समय पर विचार-विनिमय करूँगा। पर यह तभी तो उचित है, जब मैं अपने घरबार को साफ-सुथरा रखूँ, और अपने को सफाई-पसंद साबित करूँ।

अब शिक्षा की बात लूँ। मेरी उम्र चालीस वर्ष की है तो क्या और पैंतालीस वर्ष की है तो क्या? अच्छा काम करने में उम्र का कोई बन्धन नहीं होना चाहिए, वह तो चाहे जब शुरू किया जा सकता है। यदि मैं अब तक कुछ पढ़ा-लिखा नहीं तो अवश्य ही इसमें समाज तथा राज्य भी दोषी है। पर मैं उनकी बात क्यों सोचने बैठूँ। मुझे तो सोचना यह है कि मेरा कर्त्तव्य क्या है। अवश्य ही मेरे लिए यह बहुत ग्लानि की बात है कि मुझे साधारण पढ़ना-लिखना नहीं आता। मैं रामायण भी नहीं पढ़ सकता, सरकारी सूचनाएँ दूसरों से पढ़वाकर सुनता हूँ, घर का हिसाब-किताब कराने के लिए मुझे दूसरों की शरण लेनी पड़ती है, और जब कहीं हस्ताक्षर या दस्तखत की ज़रूरत होती है तो मुझे अँगूठे की निशानी लगानी पड़ती है। मुझ अभागे को अपना नाम भी लिखना नहीं आता!

पर अफ़सोस करने से ही काम न चलेगा। मुझे अपना नाम ही

नहीं, पत्र लिखना भी आना चाहिए। मैं आज से निश्चय किये लेता हूँ कि जैसे-भी हो मैं पढ़ना-लिखना सीखूँगा। अगर परमात्मा मेरी जिन्दगी एक वर्ष भी और बनाये रखे तो मैं अपढ़ अवस्था में नहीं मरूँगा। और, अब तो जगह-जगह साक्षरता या शिक्षा का प्रचार हो रहा है। सरकार अध्यापकों तथा पाठशालाओं की व्यवस्था कर रही है। मैं भी शाला में भरती होऊँगा। हाँ, यह ठीक है कि मेरा लड़का भी अनपढ़ है, और उसे भी पढ़ाना है। दोनों एक-साथ पढ़ना शुरू करेंगे। शायद कुछ आदमी बाप बेटे को एक साथ पढते देखकर हँसी करें। पर ऐसी हँसी से मैं एक अच्छे काम को क्यों छोड़ूं! जो लोग आज हँसी करेंगे, वे जब मेरे दृढ़ निश्चय को देखेंगे तो कुछ समय बाद स्वयं हँसना छोड़ देंगे। नहीं, वे ही मेरे साहस की प्रशंसा करेंगे। धीरे-धीरे दूसरे आदमी भी मेरे उदाहरण से शिक्षा लेंगे। अब तक हमारा प्यारा गाँव निरक्षरों का गाँव कहा जाता है, यह हम लोगों के लिए बड़े अपमान की बात है। जैसे भी हो, हमें इस अपमान को हटाना होगा। मैं अपने अन्य बन्धुजनों से इस विषय की खूब चर्चा करूँगा, और उनका भी पढ़ना सीखने के लिए उत्साह बढ़ाऊँगा।

हमें अपने गाँव का अभिमान है। हम इसे निरक्षर गाँव नहीं रहने देंगे। हमारा प्यारा गाँव दूसरों की निगाह में असभ्य और अशिक्षित माना जाय, इससे बढ़कर हमारे लिए कलंक की बात और क्या होगी? हमारे जन्म के समय यह गाँव जैसा अज्ञानमय था, यदि हमारे मरते समय भी वैसा ही मूर्ख बना रहा तो हमारे इस जीवन का लाभ ही क्या हुआ? इस गाँव का सुधार कोई बाहर से आकर करेगा, यह धारणा ही ग़लत है। हम किसी के भरोसे क्यों बैठे रहें! गाँव

हमारा है इसकी अवनति का दोष हम पर है। इसका सुधार करना हमारा काम है, और हम इसे करके रहेंगे। तभी तो हमारा, इस गाँव को अपना गाँव कहना सार्थक होगा। सच्चा प्रेम वही है जो सुधार और विकास में सहायक हो। मुझे जैसा अपना शरीर प्यारा है, वैसे ही अपना गाँव भी प्यारा है. उसका सुधार और उन्नति मैं जी-जान से करूँगा।

नोट—गाँव के सब निवासियों को इसी प्रकार के विचार रखने चाहिए। नगर निवासियों को अपने-अपने नगर के प्रति इसी तरह की भावना रखते हुए नगरोन्नति के लिए अपना कर्त्तव्य पालन करते रहना चाहिए।

परिशिष्ट—२

नागरिकता की कसौटी

प्यारे विद्यार्थियो! तुम आज दिन स्कूल में बेंचों पर बैठकर शिक्षा प्राप्त कर रहे हो। जल्दी ही वह समय आनेवाला है, जब तुम्हें देश-सुधार सम्बन्धी विविध समस्याओं पर विचार करना होगा, और अनेक रचनात्मक कार्यों में भाग लेना होगा। राष्ट्र के भावी सूत्रधार तुम्हीं हो। अपने ऊपर आनेवाले इस महान् उत्तरदायित्व का विचार करते हुए तुम्हें सुयोग्य नागरिक बनने का प्रयत्न करना चाहिए।

हम जन्म से तो मनुष्य हैं, परन्तु असल में मनुष्य कहलाने के लिए हमें मनुष्य के कार्य करने चाहिए और अच्छे गुणों

को प्राप्त करना चाहिए। उसी प्रकार यद्यपि हम जन्म से तो भारतीय नागरिक हैं, पर हमें अपने कार्यों और व्यवहार से भी यह दर्शाना चाहिये कि हम नागरिक कहेजाने के योग्य और अधिकारी हैं। विद्यार्थियों को याद रखना चाहिये कि कुछ नागरिक कार्य तो ऐसे हैं, कि उनके करने की योग्यता धीरे धीरे और कुछ काल पीछे प्राप्त होगी। परन्तु कितनी-ही बातें तो हम अभी, अपने विद्यार्थी-जीवन में भी कर सकते हैं। हम कोई काम ऐसा न करें, जिससे हमारे साथियों या अध्यापकों आदि को असुविधा या हानि हो। हम दूसरों से सहानुभूति और सहयोग का भाव रक्खे, अपने स्वार्थ बेपरवाही या आराम-तलबी से किसी के लिए कष्टदायक न बनें। हम अपने बात के पक्के हों, और व्यवहार के खरे हों। हम अपने क्लास और स्कूल के अंग हैं, हमें इसका उचित अभिमान करना चाहिए और उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाने का भरसक प्रयत्न करना चाहिए। जहाँ तक हमारा सम्बन्ध है, हमें ऐसा लोकमत बनाने में सहायक न होना चाहिए कि इस क्लास के लड़के बड़े खराब हैं, या यह स्कूल बहुत रद्दी है। हमने इन्हें जिस रूप में पाया, उससे हम इन्हें अच्छी दशा में छोड़ने के लिए कमर कसें।

भारतवर्ष अपने भावी उत्थान के लिए युवकों तथा विद्यार्थियों की ओर निहार रहा है। यदि वे इस समय अपना अच्छा परिचय देंगे तो वह सब विघ्न-बाधाओं को दूर करके आने वाले संसार में यथेष्ट स्थान प्राप्त करेगा। इसलिए हमें रोज़मर्रा के व्यवहार में नागरिकता के भावों का परिचय देना चाहिए।

एक विद्वान ने नागरिकता के भावों की परीक्षा करने के लिए नीचे

लिखी प्रश्नावली तैयार की है। प्रत्येक प्रश्न के तीन रूप हैं :—क, ख और ग। क के अनुसार कार्य करने के लिए दस अंक रखे गये हैं, ख और ग के अनुसार कार्य करने के लिए क्रमशः ५ और ० अंक हैं। इस प्रकार जो व्यक्ति सब प्रश्नों के क रूप में सूचित भाव के अनुसार काम करें, वे १०० अंक के अधिकारी माने जाते है। यह नागरिक योग्यता की अधिकतम सीमा है।

प्रश्नावली

१—(क) क्या आप नियत समय पर लोगों से मिलने को तैयार रहते हैं? या

(ख) आप कभी-कभी देर भी कर देते हैं? या

(ग) आप मिलने के लिए आनेवाले लोगों को हमेशा रोक रखते हैं?

२—(क) दूसरों को वचन देने में और उसका पालन करने में आप हमेशा सावधान या चौकस रहते हैं? या

(ख) यूँही दिया हुआ वचन भूल जाते हैं? या

(ग) वचन देना और उसे पूरा न करना आपकी आदत ही हो गयी है?

३—(क) आपके मातहत काम करनेवाले नौकर, कर्मचारी आदि के साथ आपका बर्ताव सहानुभूति तथा भलमनसाहत का होता है? या

(ख) आपकी यह राय है कि इनका काम है सो करते रहते हैं? या

(ग) इन लोगों की मुसीबतों वगैरह के बारे में आप उदासीन रहते हैं।

४—(क) आपके पास आनेवाले बिलों को आप तुरन्त चुका देते हैं ? या

(ख) कभी-कभी आपके बिल महीनों तक पड़े ही रह जाते हैं ? या

(ग) आपका तरीका यह बन गया है कि बिल आये और पड़े रहें ?

५—(क) क्या आप अपने समाज में लोकप्रिय हैं ? या

(ख) आपके आस-पास ऐसे आदमी भी हैं, जो आप से अधिक लोकप्रिय हैं ? या

(ग) आपकी पहिचान के लोग भी आपको टालने की कोशिश करते हैं ?

६—(क) छोटे बच्चे आपके पास खुश रहते हैं ? या

(ख) बच्चों की इच्छा न हो तो भी आप उन्हें काफी देर तक बहला सकते हैं ? या

(ग) बच्चों के बीच आपका जी घबराता है ?

७—(क) क्या आपका यह मत है कि हरेक आदमी को सार्वजनिक सफाई की ओर ध्यान देना चाहिये ? या

(ख) आप भी राह चलते कागजों के टुकड़े सड़कों पर फेंक दिया करते हैं ? या

(ग) आपकी यह राय है कि सार्वजनिक सफाई फ़जूल सी चीज़ है ?

८—(क) अपने निजी रहन सहन और धर्म-भावनाओं के बारे में पड़ोसियों का दिल न दुखाने की आप सदा कोशिश करते हैं। या

(ख) आपके विचार में पड़ोसियों की भावनाओं को जानने की झंझट में पड़ना व्यर्थ है ? या

(ग) आपकी इच्छा रहती है कि दूसरे की राय के बारे में लापरवाही दिखायें ?

९ – (क) कल्पना करो कि आपको दस रुपये का एक नोट मिल जाय। क्या आप यह पता लगाने की खूब कोशिश करेंगे कि नोट किसका है ? या

(ख) अगर वह आदमी पता लगाने आये और कहे कि नोट मेरी है तो आप उसे लौटा देंगे ? या

(ग) 'चलकर आई हुई लक्ष्मी' को लौटाना आपको पसन्द नहीं है ?

१०—(क) क्या आप सार्वजनिक संस्थाओं को अपना चन्दा नियमित रूप से, समय पर दे देते हैं ? या

(ख) कभी-कभी मदद कर दिया करते हैं ? या

(ग) ऐसे खर्चों से आपको नफ़रत है ?

पाठकों को प्रति सप्ताह इन प्रश्नों के आधार पर अपनी नागरिकता की भावना की जाँच करते रहना चाहिए। इससे वे अपनी प्रगति का अनुमान कर सकते हैं। जो पाठक चाहें वे अपनी परिस्थिति तथा अपने गुरुजनों के परामर्श के अनुसार, प्रश्नावली को बदल लें; परन्तु परीक्षा में कड़ाई से काम लेना चाहिये, अंक देने में रियायत न करनी चाहिये; यदि आरम्भ में अच्छे अंक प्राप्त न हों, परीक्षा में फेल हो जावें तो कोई घबराने की बात नहीं है; आगे और अधिक उत्साही और कर्त्तव्य-परायण होना चाहिए।

भारतीय ग्रन्थमाला

भारतीय शासन (नवाँ संस्करण)	...	१॥)
भारतीय विद्यार्थी विनोद (तीसरा संस्करण)	...	॥=)
हमारी राष्ट्रीय समस्याएँ (सातवाँ संस्करण)	...	१)
हिन्दी में अर्थशास्त्र और राजनीति साहित्य (दूसरा संस्करण)		२)
भारतीय सहकारिता आन्दोलन (दूसरा संस्करण)	...	२|||)
भारतीय जागृति (चौथा संस्करण)	...	२)
विश्व वेदना	...	|||=)
निर्वाचन पद्धति (चौथा संस्करण)	...	|||)
नागरिक कहानियाँ	...	॥=)
राजनीति शब्दावली (तीसरा संस्करण)	...	१|||)
नागरिक शिक्षा (पाँचवाँ संस्करण)	...	१)
ब्रिटिश साम्राज्य शासन (चौथा संस्करण)	...	१।)
श्रद्धाञ्जली	...	|||=)
अर्थशास्त्र शब्दावली (तीसरा संस्करण)	...	१|||)
कौटल्य के आर्थिक विचार (तीसरा संस्करण)	...	१॥)
अपराध चिकित्सा	...	१॥)
पूर्व की राष्ट्रीय जागृति	...	१॥)
भारतीय अर्थशास्त्र (चौथा संस्करण)	...	४)
साम्राज्य और उनका पतन	..	२)
मातृवन्दना (तीसरा संस्करण)	...	।=)
देशी राज्य शासन	...	३॥)
विश्व सङ्घ की ओर	...	२॥)
भावी नागरिकों से	...	१।)
इंगलैंड का शासन और औद्योगिक क्रान्ति	...	१)
मनुष्य जाति की प्रगति	...	३॥)
गाँव की बात ॥) ... नागरिक शास्त्र	...	२।)

भगवानदास केला, भारतीय ग्रन्थमाला; दारागंज, प्रयाग